954.21

जहाँ पाषाण बोलते हैं

डॉ.पीसी लाल यादव

जहाँ पाषाण बोलते हैं

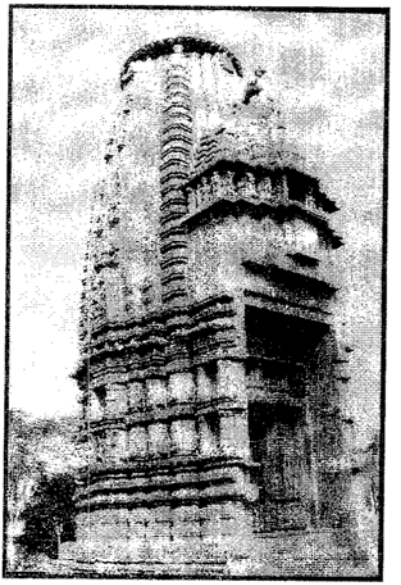

डॉ.पीसी लाल यादव

प्रकाशक

दूधमोंगरा मंडई

जिला-राजनांदगांव (छ.ग.)

जहाँ पाषाण बोलते हैं

डॉ.पीसी लाल यादव

प्रथम संस्करण : 2008

सर्वाधिकार : लेखकाधीन

प्रकाशक : 'दूधमोंगरा' गंडई. जिला–राजनांदगांव (छ.ग.)

अक्षर संयोजन एवं मुद्रण : वेधिका कम्प्यूटर्स एंड प्रिन्टर्स दुर्ग

मूल्य : 30 रूपये

समर्पण

गंडई की माटी और "दूधमोंगरा" का सम्मान

बढ़ाने वाले

दिवंगत लोक कलाकार साथियों

स्व. प्रकाश बघेल

स्व. कुसुम लता ठाकुर

स्व. धनराज चंद्रायन

स्व. दुखिया बाई मरकाम और

स्व. जोहन राम साहू को

जहाँ पाषाण बोलते हैं के प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ.

दूधमोंगरा गंडई

स्थापना - 15.08.1976

छत्तीसगढी.लोक साहित्य, लोक कला व
लोक संस्कृति के संरक्षण व संवर्धन के लिये संकल्पित

: 'दूधमोंगरा' के आधार स्तंभ :

गौतम चंद जैन, द्वारिका यादव, सरस्वती निषाद,
सुखियारिन मानिकपुरी

: संगीत संयोजन :

द्वारिका यादव, जीवन गंधर्व, रामकुमार धुर्वे, छोटेलाल सोनी,
दूधनाथ साहू, रामकुमार देवांगन

: उद्घोषक - अजय झा :

: नृत्य पक्ष :

संतोष यादव, मुकुन्द मानिकपुरी मनीराम विश्वकर्मा, श्रवण साहू, राकेश साहू, जीवन साहू, चोवाराम साहू, आशागंधर्व, सरोज निर्मलकर, कंचन मानिकपुरी, सविता सहारे, निशा कौर, राजकुमारी, बंसती कुंभकार, निशा साहू,रेखा गंधर्व.

: अभिनय :

दूधनाथ साहू, खम्हन लाल अस्तुरे, मनीराम विश्वकर्मा,
डॉ. पीसी लाल यादव

महामहिम राज्यपाल
श्री ई.एस.एल.नरसिम्हन

राजभवन
रायपुर

दूरभाष

कार्यालय	: 2331319
पी.बी.एस.	: 2331101
निवास	: 2422677
फैक्स	: 2331104

क्र./280/पीआरओ/राभ/07
रायपुर, दिनांक 17 सितम्बर 2007

संदेश

छत्तीसगढ़ के राज्यपाल श्री ई.एस.एल. नरसिम्हन को यह जानकर प्रसन्नता हुई कि छत्तीसगढ़ी लोक कलामंच 'दूध मोंगरा' के द्वारा 'जहां पाषाण बोलते हैं' पुस्तक का प्रकाशन किया जा रहा है।

राज्यपाल जी ने पुस्तक के प्रकाशन के लिए हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित की है और आशा की है कि यह पुस्तक छत्तीसगढ़ के कला संस्कृति और पुरातात्विक महत्ता को विस्तार प्रदान करेगा।

(पंकज गुप्ता)
राज्यपाल के प्रेस अधिकारी

बृजमोहन अग्रवाल
मंत्री,
वन, राजस्व, पुनर्वास, विधि एवं विधायी कार्य,
पर्यटन, संस्कृति, धार्मिक न्यास एवं धर्मस्व,
खेल एवं युवा कल्याण विभाग
छत्तीसगढ़ शासन, रायपुर

फोन (मंत्रालय) : 0771-4080226, 2221226
फैक्स नं. : 0771-2236212
निवास : बी-5/1, शंकर नगर, रायपुर
फोन : 0771-2331011, 2331070
निवास : रामसागरपारा, रायपुर (छ. ग.)
फोन : 0771-2292300, 2293000

क्रमांक/मं./वन/रा./पु./वि./प./सं./घा. एवं ध./खे. एवं यु. कल्याण 1616/PVII रायपुर, दिनांक 14-01-08

// संदेश //

यह प्रसन्नता का विषय है कि दूध मोंगरा ने "जहाँ पाषाण बोलते हैं" के प्रकाशन का निर्णय लिया है।

राजनांदगांव जिले के गण्डई अंचल में पौराणिक एवं पुरातात्विक साक्ष्य आज भी विद्यमान हैं, जो संस्कृति की गौरव गाथा का बखान कर रहे हैं। अति प्राचीन प्राकृतिक गुफा मंडीप खोल (ठाकुर टोला), डोगेश्वर महादेव तथा प्राकृतिक जल स्रोत नर्मदा कुण्ड व गण्डई का गंगई मंदिर, महत्वपूर्ण प्राकृतिक व पुरातात्विक धरोहरें हैं।

छत्तीसगढ़ शासन ने पिछले चार वर्षों में संस्कृति एवं पर्यटन को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर रेखांकित किया है।

एतदर्थ आपके संदर्भ हेतु शुभकामनाएँ.....

(बृजमोहन अग्रवाल)

संजय गर्ग
आई. ए. एस.
कलेक्टर
राजनांदगांव (छ. ग.)

कोड नं. - 07744
फैक्स नं. - 226398
फोन : कार्यालय - 226236
निवास - 226237
Email-rnandgaon@cg.nic.in
अर्ध-शासकीय पत्र क्र. 9625 / पुरा०
राजनांदगांव, दिनांक 28-7-08

संदेश

अत्यंत हर्ष की बात है कि 'दूध मोंगरा' छत्तीसगढ़ी लोक कला मंच गण्डई द्वारा राजनांदगांव जिले के गण्डई अंचल की महत्वपूर्ण प्राकृतिक एवं पुरातात्विक धरोहरों, कला संस्कृति पर आधारित 'जहाँ पाषाण बोलते हैं' नामक पुस्तिका का प्रकाशन किया जा रहा है । निश्चित रूप से इस अंचल के लोक जीवन की कला, संस्कृति एवं पुरातत्व के क्षेत्र में छत्तीसगढ़ की पहचान बनाने में ये अपना योगदान दे सकते हैं । आशा है कि प्रकाश्य पुस्तक लोगों के लिए अत्यंत प्रेरणादायक एवं लाभप्रद होगी । आपका यह प्रयास सराहनीय है ।

इस पुस्तिका के प्रकाशन पर मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ ।

(संजय गर्ग)

प्रो. गीता पेंटल
कुलपति
Prof. Gita Paintal
Vice-Chancellor

दूरभाष Telephone :-
कार्यालय Office : 07820-234534, 234673
निवास Residence: 07820-234448, 253724
फैक्स Fax : 07820-234108
ई-मेल E-mail : iksvvkgh@yahoo.co.in,
iksvvkgh@gmail.com,
gitapaintal@yahoo.com
इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय
खैरागढ़ (छत्तीसगढ़) 491881
INDIRA KALA SANGIT VISHWAVIDYALAYA
Khairagarh (Chhattisgarh) 491881

दिनांक :– 31.8.2007

संदेश

रत्नगर्भा छत्तीसगढ़ इतिहास, अध्यात्म, कला-साहित्य, राजनीति व पुरातत्व के क्षेत्र में अपने आरंभिक काल से किसी का मुखापेक्षी नहीं रहा। यहां का दमदमाता इतिहास है। राजा चक्रधर की सुरलहरी, भानुजी के पिंगल, बख्शी जी जैसे दिग्गज समीक्षक का यह प्रान्त विपुल साहित्यिक गरिमा से मंडित रहा और आज भी है। यहां की संस्कृति ऋषि, कृषि और वन संस्कृति के सम्यक रूप में उद्‌भासित है।

छत्तीसगढ़ महतारी जहां एक ओर लोक संस्कृति की विभिन्न परम्पराओं के माध्यम से अपने अंतर्भावों को अभिव्यक्ति प्रदान करती है, वहीं कल-कल निनाद, संग गुनगुनाती पक्षियों के कलरव के साथ खिलखिलाती वन उपवन में लावण्य लाडली वन देवी के समान प्रतीत होती है।

साहित्यिक दृष्टि से राजनांदगांव जिले का गरिमामय इतिहास रहा है। इसमें भी गण्डई अंचल की संस्कृति और पुरातात्विक धरोहरों में लोक जीवन की कला, संस्कृति व सभ्यता के दर्शन होते हैं।

हर्ष का विषय है कि दूध मोंगरा द्वारा प्रकाशित पुस्तक "जहाँ पाषाण बोलते हैं" में गण्डई अंचल की कला, साहित्य, संस्कृति एवं पुरातत्व का सुन्दर समावेश होगा।

जिन महत् उद्‌देश्यों की पूर्ति के लिए "जहाँ पाषाण बोलते हैं" का प्रकाशन हो रहा है, उसमें सफल हों, ऐसी सदिच्छा है।

मंगल कामनाओं सहित...

(प्रो. गीता पेंटल)

डॉ. आर.एन.विश्वकर्मा
विभागाध्यक्ष
भारतीय कला का इतिहास एवं संस्कृति
इं.क.स.वि.वि. खैरागढ़

निवास
A/18, गंगा सदन
कुसुम नगर, राजनांदगांव
मो.नं. 94255605883

संदेश

यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है कि "दूध मोंगरा" छत्तीसगढ़ी लोक कला मंच, गंडई द्वारा क्षेत्रीय कला एवं संस्कृति पर आधारित पुस्तक "जहाँ पाषाण बोलते हैं" का प्रकाशन किया जा रहा है।

उल्लेखनीय है कि भोरमदेव क्षेत्र प्राचीनकाल से ही कला एवं संस्कृति के संवर्धन में महती भूमिका का निर्वाह करता आ रहा है। इस क्षेत्र में प्राप्त भोरमदेव, मंड़वामहल, घटियारी, गंडई आदि के शिवमंदिर तथा कटंगी एवं भड़भड़ी की क्रमशः केशव तथा द्रोपता की अनूठी मूर्तियाँ इसकी ज्वलन्त प्रमाण हैं। साथ ही डोंगरेश्वर महादेव, मण्डीपखोल, भँवरदाह, नर्मदाकुण्ड आदि महत्त्वपूर्ण-पर्यटन स्थल हैं।

आशा है प्रकाश्य पुस्तक में उपरोक्त पुरातात्विक एवं पर्यटन स्थलों पर नवीन एवं तथ्यपरक प्रकाश डाला जायेगा, जिससे जिज्ञासु, शोधार्थी तथा आगत पीढ़ी के लोग लाभन्वित हो सकेगें।

प्रकाशन मण्डल के अथक प्रयास की मैं सराहना तथा अपनी हार्दिक शुभकामना व्यक्त करता हूँ।

(डॉ. आर.एन. विश्वकर्मा)

नाग की प्राकृतिक संरचना : मंडीप खोल

भाँड़ देऊर : शिव मंदिर गंडई का पार्श्व भाग

मंडीप खोल गुफा में प्रवेश के लिए आतुर दर्शनार्थी

दो शब्द

वर्तमान बीत कर अतीत में तब्दील होता है। अतीत माने इतिहास। वर्तमान का सरोकार इतिहास से जुड़ा होता है। जिसका वर्तमान है उसका इतिहास है, और उसी का भविष्य भी। वर्तमान की उपलब्धियां इतिहास की गौरवशाली पहचान को विस्मृत कर देती हैं। इतिहास के आंचल में ही वर्तमान पलता है। इसलिए अपने इतिहास को जानना जरूरी होता है। अपनी पुरा सम्पदा, कला, संस्कृति और परम्पराओं से परिचित होना उतना ही जरूरी है, जितना कि वर्तमान पर गर्व करना और भविष्य की सुखद कल्पना करना। "जहाँ पाषाण बोलते हैं", एक विनम्र प्रयास है,अपने अंचल के अतीत और वर्तमान को झांकने का।

मुझे आज भी याद है। जब मैं कक्षा तीसरी में पढ़ता था, तब हमारे गुरूजी थे, श्री महेन्द्र दास वैष्णव। आज भी उनकी शिक्षकीय गरिमा और उनके कर्म की सजीव स्मृतियां मेरे मानस पटल पर अंकित हैं। अब की पढ़ाई और तब की पढ़ाई में बड़ा अन्तर है। श्री वैष्णव जी उस समय नियमित रूप से महीने के अंतिम शनिवार को मासिक परीक्षा लेते थे। कक्षा में नहीं, बल्कि कक्षा से बाहर, प्रकृति की गोद में। तब हम कक्षा तीसरी में गिने-चुने 10-15 विद्यार्थी पढ़ते थे। माह के अंतिम शनिवार को वे सुबह से छात्र-छात्राओं को लेकर गण्डई के आसपास दर्शनीय स्थलों पर ले जाते थे। वहीं मासिक परीक्षा होती। हम सभी छात्र

बड़े उत्साह से अपने साथ अंगाकर रोटी और गुड़ लेकर जाते थे। यात्रा पैदल होती। उत्साह के आगे थकान का पता ही नहीं चलता। रास्ते में गुरूजी लोक कथाएं सुनाते। हाथी अऊ कोलिहा, तुमा वाले डोकरी, खिरमिट और न जाने क्या-क्या। बड़ा मजा आता। दर्शनीय स्थलों में जाकर परीक्षा देते, फिर मजे से इतरा-इतरा कर, मिल बांट कर अंगाकर रोटी खाते। इसके बाद गुरूजी उन स्थानों पर उसके महत्व को बताते थे। हरे भरे खेत, जंगल-पहाड़ को देखना, रंग-बिरंगे पक्षी, उनके कलरव को सुनना और प्रकृति के साथ घुलना-मिलना तो जैसे हम बच्चों के लिए पंख का काम करते थे। उन्हीं दिनों भड़भड़ी, नरोधी, नागबाहरा, नर्मदा, टिकरीपारा का शिवमंदिर इन सबसे परिचय हुआ। तब इनकी महत्ता से अनजान बचपन खेलकूद में बीत गया। किशोरावस्था में भी 8 वीं-9वीं कक्षा की पढ़ाई करते समय बड़ी भाभी का 'अघुवा' बनकर लकड़ी लाने के लिए घटियारी जंगल जाना पड़ता था। तब घटियारी की नंदी प्रतिमा से परिचित हुआ। तब भी इनका महत्व समझ नहीं आया। समय बीतते गया।

पढ़ने-लिखने की जब रूचि जागृत हुई, दूसरे स्थानों की प्रसिद्धी के बारे में पढ़ा, तब इन प्राकृतिक और पुरातात्विक स्थानों की ओर पुनः रूचि जागृत हुई। इतने महत्वपूर्ण स्थानों की महत्ता लोगों तक नहीं पहुंच पायी है, लोग इन स्थानों की विशेषताओं से अनभिज्ञ हैं, यह अंतस को कचोटने लगा। अंचल की प्रकृति, कला और संस्कृति के लिए कुछ करने का मन हुआ।

बचपन की स्मृतियों में धूमिल इन स्थानों को बार-बार देखने की इच्छा हुई। जब-जब देखा हर बार मेरी जानकारी पुष्ट होती गई और गौरव का अनुभव भी हुआ। जब गण्डई अंचल में इतने महत्वपूर्ण स्थल हैं, तो इनकी महत्ता लोगों तक अवश्य पहुँचनी चाहिए। यह सोचकर मैंने अपने स्तर पर इन स्थानों के बारे में लिखा, जिसकी काफी सुखद प्रतिक्रिया हुई। लोगों की सुखद प्रतिक्रिया, उनके स्नेह और दुलार ने इसे पुस्तकाकार में संजोने की प्रेरणा दी।

माटी जहाँ हमने जन्म लिया और महतारी जिसने हमें जन्म दिया। इनसे कोई भी मनुष्य कभी उऋण नहीं हो सकता। चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो जाये। मेरी भी अपनी यही भावना है। गण्डई की पावन मिट्टी और सुरही नदी का निर्मल जल, जिन्होंने इस शरीर को परिपोषित किया है, श्रृंगारित किया है, उन्हीं को समर्पित है यह कृति। अपनी माटी और अपनी मां से उऋण होने का छोटा सा प्रयास है, "जहाँ पाषाण बोलते हैं।" लोग गण्डई को, उसके गौरवशाली इतिहास, उसकी कला और संस्कृति को उसके परिदृश्य में जानें-पहचानें। गण्डई की नई पहचान कायम हो, यही कामना है।

दिनांक : 09.09.2008 डॉ.पीसीलाल यादव

अनुक्रम

1.	रहस्य व रोमांच से भरी प्राकृतिक गुफा : मंडीप खोल	17
2.	प्राकृतिक सौंदर्य व लोक आस्था का संगम : सुतियापाट	25
3.	मनोरम व पवित्र पर्यटन स्थल : डोंगेश्वर महादेव	32
4.	गण्डई का भाँड़देऊर : जहाँ पाषाण बोलते हैं	37
5.	घटियारी का पुरातात्विक वैभव	43
6.	भव्य प्राकृतिक व पुरातात्विक स्थल : भाँवरदाह	51
7.	खंघार से ठंढार तक की यात्रा	58
8.	मनोकामना पूर्ण करने वाली : मां गंगई	62
9.	आस्था और विश्वास का केन्द्र : नर्मदा	66
10.	पुरातात्विक महत्व के अन्य स्थान	72

रहस्य व रोमांच से भरी प्राकृतिक गुफा : मंडीप खोल

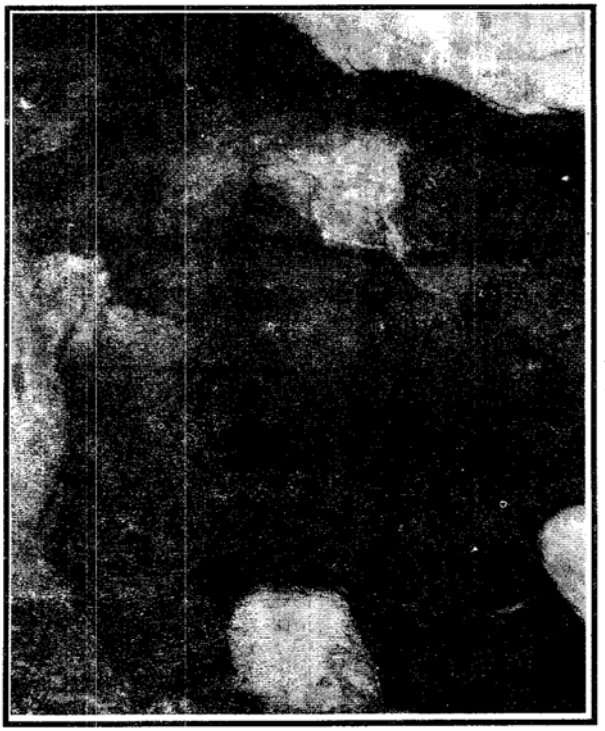

प्रकृति ज्ञान और आनंद का स्रोत है। प्रकृति मनुष्य को सदैव अपनी ओर आकर्षित करती रही है। प्रकृति के आकर्षण ने मनुष्य की जिज्ञासा और उत्सुकता को हरदम प्रेरित किया है। इसी प्रेरणा के फलस्वरूप मनुष्य प्रकृति के रहस्यों को जान-समझकर ही ज्ञानवान बना है। प्रकृति के हर उपादान उसे प्रेरित और आकर्षित करते हैं। इधर अन्वेषण की प्रवृत्ति ने ही मनुष्य को अधिक सुसंपन्न बनाया है। प्रकृति तो रहस्यों का पिटारा है। जंगलों में, पहाड़ों में प्रकृति के न जाने कितने

अलौकिक और चमत्कारिक रूप विद्यमान हैं। उसके इन रूपों का साक्षात्कार तो उन स्थानों पर ही जाकर किया जा सकता है, जहां प्राकृतिक सौन्दर्य अपनी संपूर्णता के साथ वन-प्रान्तरों में अन्वेषकों की प्रतीक्षा में हैं।

ऐसा ही एक रम्य और रोमांचकारी स्थान है "मंडीप खोल"। इसे मंडीप खोह के नाम से जाना जाता है। खोह अर्थात् गुफा। मंडीप खोल एक प्राकृतिक गुफा है, जिसके गर्भ में प्रकृति के नाना रूप अपनी विचित्रता और रहस्यमयता के साथ समाविष्ट हैं। मंडीप खोल गंडई से लगभग 35 किमी. दूर पश्चिम में ठाकुरटोला जमींदारी के पास स्थित है।

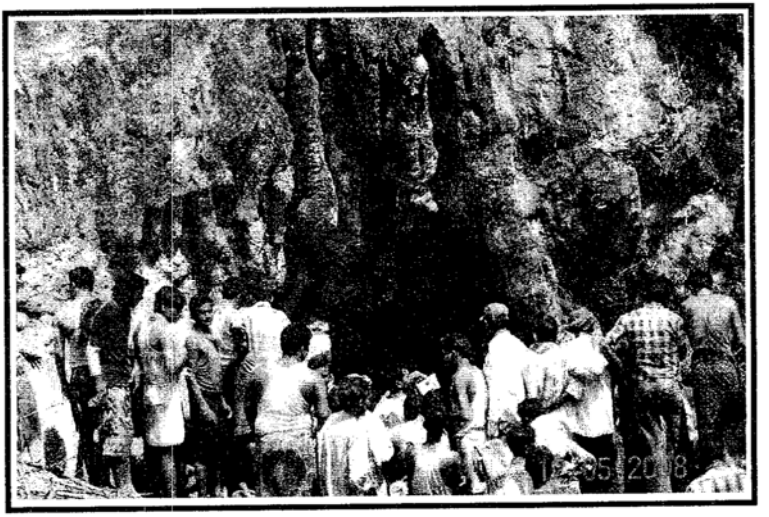

यहां पहुंचने के लिए गंडई (नर्मदा) - बालाघाट मुख्य मार्ग के किमी. 10 से आगे पश्चिम दिशा की ओर लगभग 15 कि.मी. वन मार्ग से जाना पड़ता है। यहां यह भी बताना आवश्यक है कि मंडीप खोल दर्शनार्थियों के लिए वर्ष में एक बार ही खुलता है, बैशाख शुक्ल की अक्षय तृतीया के बाद पड़ने वाले प्रथम सोमवार को। इसका कारण शायद

इस स्थान की बिहड़ता व निर्जनता हो सकती है। इस दिन मंडीप खोल में प्रकृति को जानने समझने के लिए पर्यटकों की बड़ी भीड़ एकत्रित होती है।

ग्राम नर्मदा अर्थात् नर्मदा मैय्या के पवित्र कुंड से 1 कि.मी. की दूरी के बाद वन क्षेत्र प्रारंभ हो जाता है। सड़क के किनारे की पहाड़ियां लोगों को आंमत्रित करती हैं। हरे-भरे पेड़-पौधे जैसे हवा में हाथ लहराकर प्यार से सिर झुकाकर सबका स्वागत करते हैं। गरगरा घाटी का मनोरम दृश्य, ऊंचे-ऊंचे सागौन के वृक्ष और जंगलों से आती वनफूलों की खुशबू मन को आनंद से विभोर कर देती है। गरगरा के पास ही स्थित है- डोंगेश्वर धाम चोड़रापाट। प्राकृतिक सुषमा से परिपूर्ण। इसका भी अवलोकन मन को सुकुन देता है। कितनी उदार है यहां प्रकृति, जो अपने सौन्दर्य आभा से आंखों को तृप्त करती है। जंगलपुर, अचानकपुर, चुचरूंगपुर, ठाकुरटोला रास्ते में पड़ने वाले गांव हैं। जहां के भोले-भाले और सहृदयी ग्रामीण जन हंसते-मुस्कराते मिल जाते हैं। ठाकुरटोला पुरानी जमींदारी है। ठाकुरटोला के जमींदार परिवार द्वारा ही मंडीप खोल में प्रथम पूजा-अर्चना की जाती है। यह परम्परा कब से है ? इसकी निश्चित जानकारी कोई नहीं दे पाता। पर मंडीप खोल में जमींदार परिवार द्वारा पूजा-प्रार्थना की परम्परा प्राचीन है। मंडीप खोल को भूतपूर्व जमींदार स्व. कप्तानलाल पुलस्त्य ने व्यवस्थित व प्रचारित किया। वर्तमान में उनके सुपुत्र वासुदेव सिंह पुलस्त्य के मार्गदर्शन में यहां मेला संपन्न होता है। ठाकुरटोला राज परिवार द्वारा मेले में आये यात्रियों के लिए भोजन आदि का प्रबंध किया जाता है। यह उल्लेखनीय बात है। अब तो यह भी प्रयास किया जा रहा है कि यात्री जब चाहें यहां आकर मंडीप खोल का भ्रमण व अवलोकन कर सकें।

ठाकुरटोला से आगे चलकर जैसे ही मंडीप खोल की ओर पश्चिम दिशा में प्रवेश करते हैं, मार्ग थोड़ा कठिन हो जाता है। उबड़-खाबड़ रास्ते पर थोड़ी कठिनाईयाँ के बाद दो पहिया या चार पहिया वाहनों से गन्तव्य तक पहुँचा जा सकता है। जंगली रास्ते में एक ही नाले को 10-12 बार पार करना पड़ता है। नाले का शीतल जल तन-मन को शांति देता है। ऊंचे-ऊंचे पेड़, बांसों के झुरमुट, घनी छाया वाले आम के फल व चार तेंदू यात्रियों के मन को ललचाते हैं।

शाखों से फूटती नन्हीं-नन्हीं कोपलें, चिड़ियों का कलरव और मदमाती हवा तन-मन को पुलकित करती है। लोगों की भीड़ हृदय में उत्साह का संचार करती है। चारों ओर ऊंची पहाड़ियाँ यात्रियों को प्रेरित करती हैं, ऊँचा बनने के लिए। यहाँ आकर यात्री प्रकृति की सुन्दरता में खो जाता है। पर धीरज रखिये प्रकृति की अलौकिकता और उसके रहस्य को जानने के लिए मंडीप खोल के भीतर प्रवेश करना होगा । भीतर जाने के लिए अपने साथ प्रकाश की समुचित व्यवस्था यथा-बड़ा टॉर्च, पेट्रोमेक्स या सर्च लाईट आवश्यक है।

मंडीप खोल की गुफा अत्यंत प्राचीन है। यह उतनी ही प्राचीन है जितनी कि हमारी सृष्टि। वह इसलिए कि गुफा का निर्माण एक पहाड़ी नाले से जान पड़ता है। वर्षा के दिनों में नाले का जल पहाड़ी के भीतर प्रवेश कर उसी पहाड़ी के दूसरी ओर निकल गया है। जहां से झरने के रूप में यह नाला अपनी यात्रा प्रारंभ करता है। इस स्थान को "सेतगंगा" कहते हैं। सेतगंगा का निर्मल जल कभी नहीं सूखता। जलस्रोत अदृश्य है। जैविक दृष्टि से सेतगंगा की अपनी अलग ही महत्ता है। यहाँ पर पायी जाने वाली मकड़ी, झिंगुर व मछलियां विशेष प्रकार की जान पड़ती हैं। यह जीव-विज्ञानियों के लिए अनुसंधान का विषय है। लोग यहाँ आकर सेतगंगा में स्नान कर पुण्य का भागी बनते हैं।

मंडीप खोल के भीतर घना अंधकार है। यहाँ हाथ को हाथ नहीं सूझता। ऐसे में प्रवेश की समुचित व्यवस्था साथ में होना जरूरी है। प्रकाश व्यवस्था के बिना गुफा में प्रवेश करना संभव ही नहीं है। मंडीप खोल का मुख्य प्रवेश द्वार उत्तर की ओर है। दक्षिण की ओर से भी प्रवेश किया जा सकता है, किन्तु यह मार्ग कठिन और सकरा है। कई स्थानों पर लेटकर या घसीट कर निकलना पड़ता है। जानकार लोगों के साथ ही यहाँ इस मार्ग से प्रवेश करना उचित है। प्राकृतिक रूप से निर्मित उत्तरी प्रवेश द्वार से भीतर जाने के बाद आगे बढ़ने के लिए झुककर चलना पड़ता है। फिर एक बड़े हाल की तरह आह्लादकारी स्थान यात्री के मन को रोमांच से भर देता है। गुफा के भीतर कई गुफाएँ मंडीप खोल की विशेषता है। लम्बी और चौड़ी गुफाएं। यहाँ आकर ही प्रकृति की विचित्रता का अनुभव किया जा सकता है। बायीं ओर की गुफा चमगादड़ खोल कहलाती है। यहां चमगादड़ होने के कारण स्थानीय लोगों ने इस गुफा को चमगादड़ खोल का नाम दिया है। चमगादड़ खोल में शुभ्र रजतमय प्राकृतिक संरचना को देखकर अचंभित होना स्वाभाविक है। यहाँ

की प्राकृतिक संरचना को देखना स्वर्गिक सुख की प्राप्ति करना है। ऊपर उन संरचनाओं पर जब प्रकाश पड़ता है, तो वहाँ से अलौकिक किरणें निकलती दिखायी पड़ती हैं और देखने वाला वाह-वाह कर अभिभूत हो जाता है। चमगादड़ खोल में पैरों के नीचे की नरम भुरभुरी मिट्टी, ऊपर रासायनिक क्रिया से निर्मित होने वाली धवल प्रस्तर संरचनाएं भू-वेत्ताओं व रसायनज्ञों के लिए निश्चित रूप से शोध से ही यहाँ की अद्भूत संरचनाएँ आम लोगों के समझ में आ पायेंगी। तब यह सिद्ध हो पायेगा कि मंडीप खोल की प्राकृतिक संरचना हजारों वर्ष पुरानी है।

चमगादड़ खोल से वापस लौटकर आगे बढ़ने पर ऊपर शिवलिंग की मूर्ति है। जहाँ श्रद्धालुओं द्वारा इसकी पूजा-अर्चना की जाती है। यहाँ पहुंचने के लिए बांस की सीढ़ी लगायी जाती है। तभी लोग ऊपर पहुंच पाते हैं। यह काफी कठिन चढ़ाई है। पर प्रकृति को जानने की उत्सुकता सारी कठिनाईयों को सरल बना देती है। मंडीप खोल में पाताल खोल की अपनी अलग विशेषता है। इसकी गहराई बहुत अधिक है और नीचे घना अंधकार है। अतः लोगों ने इसे पाताल खोल का नाम दिया है। मंडीप खोल में कई स्थानों पर छत से पानी की बूंदें टपकती दिखायी पड़ती है, जो प्रकाश पड़ने पर अद्भुत रूप से प्रकाशित होती हैं। फलस्वरूप कौतूहल वश उन बूंदों को स्पर्श कर आनंद का सहज अनुभव होता है। जैसे-जैसे गुफा में आगे बढ़ते हैं, प्रकृति तन्मयता के साथ इस गुफा के रहस्यों के नये-नये अध्याय और उसके लिए नये-नये द्वार खोलती जाती है। लेटकर, घसीटकर आगे बढ़े कि गुफा का विस्तृत दायरा मन को रोमांचित कर देता है । गुफा के अंदर की मनोरम आकृतियाँ और संरचना उस निराकार चितेरे का कमाल है, जिसे हम देख नहीं पाते। किन्तु यहाँ आकर उस कृतिकार के कलारूप और उसकी उपस्थिति का अनुभव किया जा सकता है। प्रकृति द्वारा निर्मित इन अनोखी आकृतियों

को देखकर आंखें थकती नहीं। देखते ही रहने को मन करता है। यहां की विचित्रता, सुन्दरता और उसकी विशेषताएं देखकर लोगों ने इन गुफाओं को अलग-अलग नाम दिया है। जैसे-इन्द्रलोक गुफा इन्द्रलोक की तरह ही शोभायमान, मीना बाजार गुफा आदि। इन सबकी संरचनाओं की विशेषताएं भिन्न-भिन्न हैं। सैकड़ों की संख्या में प्राकृतिक रूप से उद्भूत यहाँ शिवलिंग विशेष दर्शनीय हैं। ये आकृतियाँ अमरनाथ गुफा की स्मरण कराती हैं। इन्हें देखकर बरबस ही हृदय आस्था से भर जाता है, सिर श्रद्धा से झुक जाता है। प्रकृति के ये विस्मयकारी शिवलिंग अंग-अंग को आल्हादित कर देते हैं। ऐसा सुदर्शन और आनंददायक स्थान अन्यत्र शायद ही मिले। मंडीप खोल की गुफाएं और उसकी प्राकृतिक संरचनाएं हृदय को रहस्य व रोमांच से भर देती है। मंडीप खोल की गुफाएं किसी भी रूप में कुटुमसर की गुफाओं से कमतर नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि समुचित ढंग से व समग्र रूप से मंडीप खोल की गुफाओं का वैज्ञानिक सर्वेक्षण हो। यहां की प्राकृतिक संरचनाओं और यहां पाये जाने वाले जीव-जन्तुओं पर शोध हो। यहां तक पहुंचने के लिए सुगम मार्ग का निर्माण हो। यात्रियों के लिए पेयजल, विश्राम आदि की व्यवस्था हो। इसकी विशेषताओं को प्रचारित किया जाये। क्योंकि राजनांदगांव जिले में इस तरह की गुफाएँ अन्यत्र शायद ही हों। मंडीप खोल की गुफाओं की ओर संभवतः छत्तीसगढ़ शासन पर्यटन विभाग का ध्यान नहीं गया है। यदि पर्यटन विभाग इस गुफा को अपने संरक्षण में ले लेता है तो निश्चित रूप से पर्यटन विभाग के लिए यह बड़ी उपलब्धि होगी और इसका विकास भी संभव हो पायेगा। इसके लिए इस क्षेत्र के जनप्रतिनिधियों के द्वारा प्रयास की दरकार है।

आज मंडीप खोल गुफा की सुरक्षा की भी बड़ी आवश्यकता है। क्योंकि यहाँ आने वाले यात्री कौतूहल वश गुफा की भीतरी संरचनाओं को

तोड़कर नुकसान पहुंचाते हैं। उन्हें क्या मालूम कि ऐसी प्राकृतिक संरचनाओं और आकृतियों के निर्माण में सैंकड़ों वर्ष लग जाते हैं? वे इसके महत्व से अनभिज्ञ हैं। उन्हें इन प्राकृतिक संरचनाओं के महत्व को समझाना होगा, ताकि रहस्य व रोमांच से भरी मंडीप खोल की अमूल्य प्राकृतिक धरोहर भावी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रह सके।

आजकल तो लोगों में मंडीप खोल के खोजकर्ता बनने की होड़ लगी हुई है। कुछ स्वनाम धन्य लोगों ने अपने आपको मंडीप खोल का खोज कर्ता कह कर प्रचारित किया है। भला जिस गुफा में जमीदार परिवार द्वारा लगभग तीन-चार पीढ़ियों से पूजा अर्चना की जा रही है। तब से क्षेत्र के लोगों के लिए जो गुफा आस्था का केन्द्र है। उस गुफा में भला तीन-चार साल या साल भर से आने वाले लोग मंडीप खोल के खोजकर्ता कैसे हो सकते हैं? इन महानुभावों ने तो मंडीप खोल के पांरपरिक नाम को ही बदल कर किसी ने "मनदीप खोल" तो किसी ने गिरिकंदरा मंडी खोल बना दिया है। ऐसे महानुभाव मंडीप खोल के खोजकर्ता बनने के बजाय मंडीप खोल की भीतरी संरचनाओं, जीव जन्तुओं आदि पर शोध कर मंडीप खोल की विशेषताओं से लोगों को अवगत करायें तो यह ज्यादा श्रेयस्कर होगा। ❑

प्राकृतिक सौंदर्य व लोक आस्था का संगम : शुतियापाट

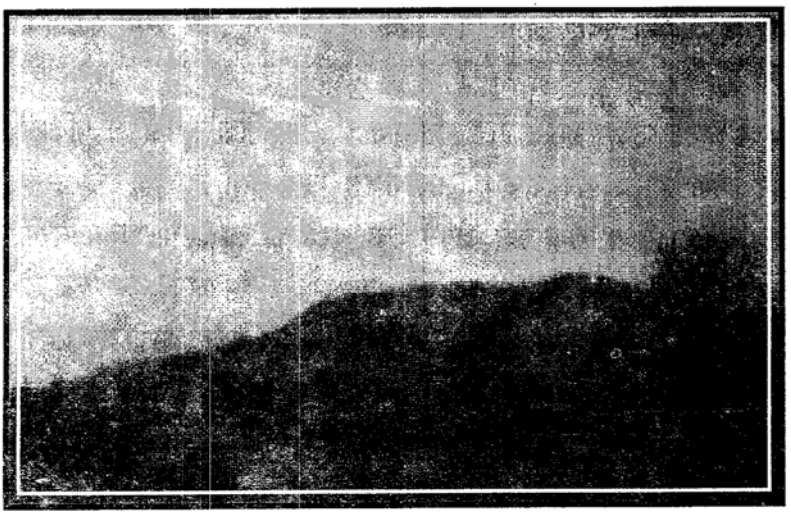

प्रकृति बड़ी आनंददायिनी है। इसका अनुभव तो प्रकृति का सामीप्य प्राप्त कर ही किया जा सकता है। उमंगती नदियां, झर-झर झरते झरने, हरे-भरे जंगल पहाड़, लहलहाते खेत-खार, झूमते पेड़-पौधे, महकती अमराई, कलरव करते पक्षी, स्वतंत्र विचरते पशु, हरी-भरी धरती, धीर-गंभीर समुद्र, निर्मल आकाश, प्रभा मंडित सूरज चांद सितारे सब प्रकृति के अंग हैं और आनंद के स्त्रोत। पर सभी एक साथ सुलभ नहीं होते। प्रकृति का सौन्दर्य तो स्थान-स्थान पर बिखरा है। आज आपाधापी के इस युग में मनुष्य प्रकृति से कटता जा रहा है। उसके पास इतना अवकाश नहीं है कि वह प्रकृति के विभिन्न रूपों का दर्शन कर चित्त को एकाग्र कर ले। नागर सभ्यता में जीने वाले लोगों की मानसिक अशांति और असुरक्षा का प्रमुख कारण प्रकृति से विलग होना ही है। परन्तु

"लोक" के साथ ऐसा नहीं है। लोक प्रकृति के अत्यंत सन्निकट है। यदि लोक को प्रकृति का पर्याय कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी। वह प्रकृति का पुजारी है। प्रकृति पर लोक की बड़ी आस्था है। इसीलिए लोक प्रकृति की पूजा करता है। नदी, पहाड़, पेड़-पौधे, सूरज-चंदा, तारे सभी लोक के पूज्य हैं।

एक पवित्र स्थान है "सुतियापाट"। प्राकृतिक सुषमा से परिपूर्ण और लोक आस्था का केन्द्र। लोक जिसे मान लेता है, वह उसे अन्त तक निभाता है । लोक उसे अपने सुख-दुख का साथी व जीवन-मरण का दाता मानता है। सुतियापाट के साथ अंचल के लोगों का ऐसा ही आत्मिक और धार्मिक संबंध है। सुतियापाट मैकल पर्वत श्रेणी की सबसे ऊंची पहाड़ी है। आसपास और भी अन्य पहाड़ियां हैं। इनकी प्राकृतिक संरचना के आधार पर लोक ने इनका नामकरण किया है । इनके नाम हैं- सुतियापाट, सुतनीनपाट, चंदेला, कुहकी, मुड़फोरवा, सुवा पंड़की आदि। इन सभी पहाड़ियों में सुतियापाट सबसे ऊंची पहाड़ी है। इसलिए इसे राजा भी कहा जाता है। राजा का आसन ही ऊंचा होता है। वह अपने श्रृंगार से भी श्रेष्ठता प्राप्त करता है। सुतियापाट की प्राकृतिक शोभा बड़ी निराली है। प्रकृति ने मानो राजा के रूप में इसका श्रृंगार बड़ी तल्लीनता के साथ किया है। यहां प्रकृति का विहंगम दृश्य देखकर आंखों को असीम शांति प्राप्त होती है। उत्तर, दक्षिण और पश्चिम में जहाँ तक नजरें जाती हैं अनन्य पर्वत श्रेणियाँ और पूर्व में मैदानी भाग का अनोखा दृश्य आँखों के साथ-साथ हृदय को भी संतृप्त करता है। इस उच्च शिखर में भी लोक की अपनी पहुँच है। यह स्थान लोक से परे नहीं है। शायद इसीलिए लोक भी आज यहां उच्च शिखर पर है। यहाँ आकर लौकिक और अलौकिक दोनों ही अनुभूतियों का आनंद लिया जा सकता

है। लौकिक रूप में यहाँ के ग्रामीणजनों की आस्था, प्रेम और व्यवहार तथा अलौलिक रूप में प्रकृति का आनंद।

सुतियापाट के साथ "पाट" शब्द की संलग्नता का विशेष महत्व है । इस अंचल में पाट शब्द से जुड़े कई स्थान हैं। यथा-खैरागढ़ पांड़ादाह के पास कुकरापाट, सलगापाट, गंडई के पास चोड़रापाट, बाम्हनपाट, चोखापाट आदि। ये सभी स्थान वन-प्रान्तरों में हैं तथा अंचल में इनकी पृथक-पृथक धार्मिक मान्यता है। लोक द्वारा पूजा विधान के लिए "पाट-पीढ़ा" व गांवों में स्थान विशेष पर "चूरीपाट" चढ़ाने की परम्परा है। इससे जाहिर होता है कि जिन स्थानों पर लोक की आस्था बढ़ी, परिणाम रूप में उसका विश्वास फलीभूत हुआ। उसे लोक ने पाट शब्द देकर अभिहित किया और श्रद्धा का केन्द्र माना। सुतियापाट का नामकरण भी इसी आस्था का प्रतिफलन प्रतीत होता है। आसपास के गांवों में ऐसी मान्यता है कि पशु आदि खो जाने पर तथा मनोकामना की प्राप्ति के लिए यहाँ मनौती मनाने के बाद इच्छित फल की प्राप्ति होती है। यहाँ शरद नवरात्रि क्वांर व बासंती नवरात्रि चैत्र में जंवारा बोये जाते हैं और मनोकामना ज्योति जलायी जाती है। सैकड़ों की संख्या में सुदूर वन-प्रान्तर में यहाँ प्रज्जवलित ज्योति कलश जनमानस की अटूट श्रद्धा और भक्ति के साक्षी हैं।

सुतियापाट और अन्य पहाड़ियाँ सुतनीन पाट, चंदेला, कुहकी, मुड़फोरवा, सुवा पंड़की आदि ग्रामीण जनों की आस्था के संवाहक है। अतः इनके संबंध में लोक की अपनी किवदन्ती है। कहा जाता है कि सुतियापाट देव स्वरूप में आज भी निराकार रूप में इस पहाड़ी के आसपास विचरण करते हैं। सुतिया अपनी पत्नि सुतनीन से बड़ा प्रेम करता था। सुतनीन के बिना वह एक पल भी नहीं रह पाता था। एक

दिन सुतिया विचरण के लिए अन्यत्र गया हुआ था। तब उसकी पत्नी सुतनीन घर में अकेली थी। देवारी (दीपावली) का समय था। कुहकी अपनी सहेलियों के साथ गौरा पूजा की तैयारी कर रही थी। कुहकी सुवा नृत्य के लिए मिट्टी का सुवा बनाकर उसे टोकरी में रखकर सुवा नृत्य के लिए निकली। उसने सुतनीन से कहा - "चलो, सुवा नाचने चलें।" सुतनीन ने कहा कि उसका पति घर में नहीं है। अतः वह सुवा नृत्य करने नहीं जा पायेगी। कुहकी ने कहा कि सुतिया के वापस आने से पहले ही हम लोग सुवा नृत्य कर आ जायेंगी । इसलिए सुतनीन तैयार हो गई। वह कुहकी व अन्य सहेलियों के साथ सुवा नाचने के लिए कर्रा (कर्ण) नदी को पार कर चंदेला के यहाँ गयी। सुतनीन, कुहकी, सुवा पंड़की के साथ सुवा नृत्य में निमग्न रही। ताली दे-देकर सुवागीत गाती और नाचती रही।

तरि हरि नाहना मोर ना हरि ना हना रे सुव ना
के तिरिया जनम झनि देय
तिरिया जनम मोर गउ के बरोबर रे सुवा ना
के जहां चाहे देय पठोय।

इधर सुतिया जब घर लौटा तो उसे घर विरान दिखायी पड़ा। उसने सुतनीन को आवाज दी, पर कोई उत्तर नहीं मिला। घर में सुतनीन को न देखकर सुतिया का मन क्रोध से भर गया। क्रोधाग्नि में जलता हुआ वह सुतनीन की तलाश में निकल पड़ा। ढूँढते-ढूँढते हुए वह कर्रा नदी के उस पार चंदेला के घर गया जहाँ से सुवा गीत की ध्वनि सुनायी पड़ रही थी। वहाँ सुतनीन सहेलियों के साथ सुवा नृत्य कर रही थी। सुतिया ने चंदेला के बाल पकड़कर उसे दूर तक खींचा, तो उसके सारे बाल उखड़ गये अर्थात् वह चदुंवा हो गया। कहते हैं कि आज भी इसी

कारण से चंदेला डोंगरी के ऊपर पेड़-पौधे या घास नहीं है। क्रोध में आदमी अपना आपा खो बैठता है। छत्तीसगढ़ी में इसके लिए बड़ी यथार्थपरक उक्ति है- " रिस खाय बुध, बुध खाय परान"। मारे क्रोध के सुतिया ने मुड़फोरवा के सिर पर बज्र की भांति मुटका मारा तो उसका सिर फूट गया। इसी कारण उस पहाड़ी पर आज भी गड्ढा है जिसमें बारहों महीने पानी रहता है। पशु-पक्षी व लोग इसी जल से अपनी प्यास बुझाते हैं । पानी छीजने का नाम नहीं लेता । पहाड़ी पर पानी का स्त्रोत भी प्रकृति का अपना रहस्य है और आस्था का कारण। लोग इसी पहाड़ी को मुड़फोरवा कहते हैं। इतने पर भी सुतिया का क्रोध शांत नहीं हुआ। जब सुतिया कुहकी को मारने के लिए दौड़ा तो कुहकी "कुहकी" अर्थात् विशेष आवाज करती हुई जान बचाकर भागी । आज भी उस पहाड़ी पर आवाज लगाने से कुहकी की प्रतिध्वनि कानों में लौटकर कुहकी का स्मरण कराती है । कुहकी के भाग जाने पर सुतिया सुवा व पंड़की की ओर लपका और उन्हें भी मारा। सुवा पंड़की डोंगरी में आज भी सुवा की चोंच व पंड़की के पंख के आकार के पत्थर मिलते हैं। इसलिए इस डोंगरी को सुवा पंड़की डोंगरी कहते हैं। इधर भयभीत सुतनीन किनारे सहमी हुई खड़ी थी। सुतिया जब सुतनीन को साथ लेकर वापस घर आ रहा था, तभी मूसलाधार वर्षा होने लगी। पानी की बूंदे भी सुतिया के क्रोध को शांत नहीं कर पा रही थी। सुतिया आगे-आगे चल रहा था और सुतनीन पीछे-पीछे। सुतिया नदी को पार कर चुका था। तभी कर्रा नदी में "बईहा पूरा", भयंकर बाढ आ गई। सुतनीन नदी के उस पार ही रह गई। कहते हैं कि तब से कर्रा नदी के उत्तर में सुतनीन पाट व दक्षिण में सुतियापाट आज पहाड़ी के रूप में स्थित हैं और लोगों की आस्था के केन्द्र बने हुए हैं । वर्षों से मिलन की साध लिये ये सुतियापाट और सुतनीन पाट पहाड़ी

बांध के माध्यम से मिल जायेंगे। तब यह क्षेत्र धन-धान्य से परिपूर्ण हो जायेगा इस अंचल की किस्मत ही बदल जायेगी। पर लोक की आस्था नहीं बदलेगी। वह तो और भी सुदृढ़ होगी। लगभग 50 करोड़ की लागत से बनने वाले इस बांध से यहां पर्यटन की संभवनाएं बढ़ेंगी, सुविधाएं बढ़ेंगी और पहुंच मार्ग सुगम हो जाने से सुतियापाट की ओर लोग बरबस ही खींचे चले आयेंगे।

सुतियापाट में एक प्राचीन गुफा है। यह गुफा प्रकृति के रहस्य और रोमांच को उजागर करती है। दोनों नवरात्रि पर्वों में यहाँ ज्योति कलश की स्थापना की जाती है। तब इस गुफा का महत्व और भी द्विगुणित हो जाता है। गुफा का विस्तार दूर-दूर तक है। गुफा के भीतर भारत के मानचित्र की भांति पंक्तिबद्ध ज्योतिकलश बरबस ही देश-प्रेम की भावना से मन को भर देते हैं। गाँव-गाँव से आयी हुई भजन सेवा मंडली माँ हिंगलाज की स्तुति गाती है। माँदर, ढोलक, चाँग, नंगारा व मंजीरे की झँकार से सारा जंगल गूँजने लगता है। जसगीतों की स्वर लहरी मन को झूमने के लिए अधीर कर देती है। पेड़-पौधे, डोंगरी-पहाड़ भी जैसे अपनी प्रतिध्वनि देकर ममतामयी माँ हिंगलाज का यशगान करते हैं। सृष्टि में मां ही श्रेष्ठ है। मातृऋण से भला कौन उऋण हुआ है? मां का स्तुतिगान ही मातृऋण से उऋण होने का प्रयास है। उसकी संतान का यह प्रयास तो यहां अनवरत जारी रहेगा और इस प्रयास के लिए तो शक्ति माँ ही देती है।

सुतियापाट का प्राकृतिक सौन्दर्य असीम है। सुतियापाट गुफा से आगे बावा कछेरी है। इस स्थान से प्रकृति के विहंगम दृश्य का अवलोकन किया जाता है। यहाँ शेषनाग की आकृति का चट्टान विशेष दर्शनीय है। नीचे कमरे के आकार की जगह है जहाँ पर शिवलिंग स्थापित है। श्रद्धालु

यहां भोले बाबा की पूजा-अर्चना करते हैं। सुतियापाट जहां दर्शनार्थियों को लोक आस्था से जोड़ता है, वहीं उन्हें प्रकृति को जानने समझने के लिए प्रेरित करता है।

सुतियापाट पहुंचने के लिए मुख्य रूप से दो रास्ते हैं। एक भैंसबोड़ होकर तथा दूसरा मोतिमपुर होकर। सुतियापाट कवर्धा जिला मुख्यालय से लगभग 45 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। कवर्धा-राजनांदगाँव राजमार्ग में बिड़ोरा चौक से उपरोक्त दोनों मार्ग सुलभ होते हैं। सहसपुर लोहारा व सिल्हेटी से भी सुतियापाट जाने का मार्ग है। सुतियापाट की ऊंचाई लगभग 1500 फीट हैं ऊपर पहाड़ी तक पहुँचने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। यहाँ अभी और सीढ़ियों की दरकार है, ताकि यात्रियों के लिए यात्रा सुगम हो सके। यहाँ ज्योति कक्ष का निर्माण हो चुका है। "सुतियापाट हिंगलाज माँ सेवा समिति बामी" सतत रूप से प्रयासरत है। समिति का प्रयास है कि यहाँ पेयजल, विद्युत और विश्राम गृह की समुचित सुविधाएँ हो। इस समिति के अध्यक्ष डाकवर सिंह मेरावी, उपाध्यक्ष गोपाल सिंह खुशरो, सचिव गिरवर राम साहू के साथ ही आसपास के लगभग 40 गांवों के लोग सुतियापाट के विकास के लिए संकल्पित हैं । सुतियापाट को प्रमुख रूप से मुख्यमंत्री डॉ. रमन सिंह, पूर्व विधायक स्व. दरबार सिंह ठाकुर, पूर्व विधायक डॉ. सियाराम साहू एवं वर्तमान विधायक मो. अकबर का विशेष सहयोग प्राप्त हुआ है। इनके संरक्षण में समिति प्रगति की ओर सतत गतिमान है। समिति के कार्यों को देखते हुए यह आशा बंधती है कि सुतियापाट लोगों की आस्था का केन्द्र तो है ही और अब यह शीघ्र ही पर्यटन केन्द्र के रूप में प्रतिष्ठित होगा। ❑

मनोरम व पवित्र पर्यटन स्थल : डोंगेश्वर महादेव

वर्तमान समय आपाधापी का समय है । मनुष्य इस आपाधापी के कारण मानसिक शांति से कोसों दूर है। सुख-सुविधा की चाहत में मनुष्य इतना उलझ गया है कि भौतिक संपदाओं की उपलब्धि के बावजूद भी न तो उसकी आंखों में नींद है, और न ही दिल में चैन। ऐसी स्थिति में उसके शारीरिक कष्टों और उसके मन की अशांति को कोई शांत कर सकती है, तो वह है प्रकृति। आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य प्रकृति के साथ पूर्ण तादात्म्य बनाकर चले। प्रकृति तो प्रदायिनी है आनंद की, ज्ञान की और लौकिक-अलौकिक सुख-समृद्धि की। जो प्रकृति से

जुड़ा हैं, वही सुखी है, वही समुन्नत और समृद्धिशाली है। प्रकृति के नैसर्गिक सौन्दर्य से परिपूर्ण ऐसा ही एक मनोरम स्थल है- डोंगेश्वर महादेव।

डोंगेश्वर महादेव राजनांदगांव जिला मुख्यालय से लगभग 75 कि. मी. दूर गण्डई (नर्मदा)- बालाघाट मार्ग के आठवें कि.मी. पर स्थित है। यहां प्रकृति अपनी सम्पूर्ण मनोरमता के साथ बिखरी हुई है। मैदानी क्षेत्र की समाप्ति के पश्चात मानपुर गांव से प्रारंभ होता है प्रकृति का सौन्दर्य दर्शन, जो आंखों को बरबस ही असीम शांति देता है। सलिहा, मोंदे, भिरहा, कर्रा, कोरई, पलास आदि वृक्षों से शोभित यह जंगल, जहाँ रंग-बिरंगे पक्षी शांति गीत गाते और राहगीरों को अपनी ओर बुलाते हैं। इस शांति गान में शामिल होने के लिए। गरगरा घाटी की चढ़ाई यहीं से प्रारंभ होती है। लगभग डेढ़ किमी. लम्बी गरगरा घाटी अपनी सुन्दरता से सबको सम्मोहित करती है। ऊंची पहाड़ियाँ, सागौन के ऊँचे-ऊँचे, हरे-भरे पेड़ यहाँ की वन सम्पदा के स्वमेव साक्षी हैं। प्राकृतिक रूप से उगे और वन विभाग द्वारा रोपित सागौन वृक्षों का यह क्षेत्र "सैगोना रवार" के नाम से जाना जाता है। गरगरा घाटी में गरगरा की छोटी मढ़िया व विशाल दुर्गा मंदिर दर्शनीय है। इसी मंदिर स्थल से मुख्य मार्ग को छोड़कर दक्षिण दिशा की ओर जाना पड़ता है, डोंगेश्वर महादेव के लिए। यहाँ पर छोटा सा गाँव है- जंगलपुर, झाड़ियों के बीच दुबके हुए खरगोश की तरह प्रतीत होता है। यह गांव पहाड़ियों से घिरा हुआ है। दायें-बायें पहाड़ियों के बीच हरे-भरे खेतों से उठती है यहाँ माटी और लोक जीवन की सौंधी-सौंधी गंध। खेतों से लगी चट्टानी धरती के नीचे है डोंगेश्वर महादेव का मंदिर। इसी मंदिर के नीचे है एक और गाँव बगदुर। बगदुर की काली उपजाऊ मिट्टी केवल फसलें ही नहीं उगाती। बल्कि यहाँ उगती और पनपती हैं धर्म, आस्था, प्रेम, सद्भाव और पारस्परिक सहयोग की मंगल भावनाएँ। लोक की यही मंगल भावना

डोंगेश्वर मंदिर के निर्माण की प्रेरिका है।

पहले इस स्थान का नाम चोड़रापाट था, जो अब चोड़राधाम हो गया है। इस स्थान के प्राकृतिक सौन्दर्य से प्रभावित होकर गण्डई के भूतपूर्व जमींदार लाल डोगेन्द्रशाह खुशरों ने यहां लोगों को मंदिर निर्माण की प्रेरणा दी और उसी के फलस्वरूप 1976 में यहाँ शिव मंदिर का निर्माण किया गया । यहाँ की प्राकृतिक शोभा बड़ी ही निराली है। बड़े-बड़े चट्टान, चट्टानों के बीच झरता जल का प्राकृतिक अविरल स्रोत हृदय के तारों को झँकृत कर शीतलता प्रदान करता था । इसी अविरल स्रोत को 1976 में संगमरमर से निर्मित गो मुख से निकालकर शिवलिंग पर प्रवाहित किया गया। जिसे लोग गुप्त गंगा कहते हैं। गुप्त गंगा का स्रोत स्थल गुप्त है। लोक जीवन में जल को गंगा की संज्ञा दी जाती है। चूंकि गंगा का स्रोत गुप्त है। अतः इसका गुप्त गंगा नामकरण सार्थक जान पड़ता है। कितनी ही गर्मी क्यों न हो गुप्त गंगा कभी नहीं छीजती। यह पतली किन्तु अविरल रूप में सतत् प्रवाहित हो रही है। इस प्रयास से इस स्थान की महत्ता और बढ़ी। लोग आकर्षित हुए और आज डोंगेश्वर महादेव एक पवित्र पर्यटन स्थल के रूप में प्रतिष्ठित हो चुका है। यहाँ आकर मन को अगाध शांति मिलती है। मंदिर से लगे दो कुण्डों का निर्माण किया गया है। बड़े कुण्ड से लोग जल निकालकर स्नान करते हैं और गो-मुख से प्रवाहित गुप्त गंगा व शिवलिंग के दर्शन कर धन्य होते हैं। एक गंगा है जो शंकर की जटा से निकलकर लोगों को पवित्र कर रही है और एक ये गंगा है जो शिवलिंग पर स्वयं प्रवाहित होकर लोकजीवन को धन्य कर रही है। अंचल के लोगों की धार्मिक आस्था और विश्वास के कारण यहाँ गुप्त गंगा के जल को भी गंगा जल की तरह मान्यता प्राप्त है। ऐसी मान्यता है कि यहाँ के जल को वर्षों तक रखने पर भी उसकी पवित्रता कायम रहती है। इस जल के उपयोग से अनेक रोगों का उपचार होता है। फसलों में लगने वाले रोगों के लिए कृषक इसी जल का उपयोग

करते हैं। यह सब आस्था और विश्वास की बात होती है। "मानें तो देवता नहीं तो पथरा ।" लोक की अपनी मान्यता होती है ।

प्रकृति जितनी सहज है, उतनी ही विचित्र भी। डोंगेश्वर महादेव में भी ऐसी ही विचित्रता है। दो चट्टानों के बीच एक संकरा मार्ग है, जो ऊपर की ओर खुलता है। इसे "मुड़बुलका" कहते हैं। मुड़बुलका का अर्थ है- सिर को निकालने की क्रिया। मुड़बुलका में सिर को ऊपर की ओर उठाकर तथा दोनों हाथों से टेककर ही ऊपर निकलना पड़ता है। यहां ऐसी लोक मान्यता है कि इस मार्ग से केवल पुण्यात्मा ही पार हो सकता है। बहुत सारे लोग अपराध बोध या भयग्रस्त होने के कारण इस मार्ग से नहीं निकलते। इस मार्ग से सच्चे लोग ही निकलें, ऐसा कुछ नहीं है। बुरे लोग भी निकल जाते हैं। सच्चे-बुरे की परख के लिए कहीं कोई कसौटी है? पर हाँ इतना जरूर है मुड़बुलका से निकलना आनंद का एहसास कराता है। यहां पर एक प्राकृतिक गुफा है। जिसके भीतर प्रवेश करना आदिमानव के प्राकृतिक आवास का सहज स्मरण कराता है।

डोंगश्वर महादेव से प्रकृति के विहंगम दृश्यों का अवलोकन करना आनंद को द्विगुणित करता है। आँखों के सामने हरियाली ही हरियाली। हरितिमा से परिपूर्ण पहाड़ी और पहाड़ी के नीचे दूर तक फैले हरे-भरे खेत तन और मन की क्लान्ति मिटाकर शांति देते हैं। वर्षाकाल में डोंगेश्वर महादेव का प्राकृतिक सौन्दर्य और भी अप्रतिम होता है। ऊपर पहाड़ी से खेतों का पानी एक वृहद् झरने के रूप में झरता है। झर-झर झरने का शोर, पेड़-पौधें का हहराना और चिड़ियों का कलरव अलौकिक संगीत का सृजन करते हैं । डोंगेश्वर महादेव की पहाड़ियों के आसपास औषध वनस्पत्तियों की भरमार है । दूर-दूर से जानकार लोग यहाँ आकर औषधियों का संचयन कर ले जाते हैं। आस-पास दुर्लभ धाँस नामक वृक्ष बड़ी संख्या में है। धाँस की छाल श्वांस, दमा के रोगियों के लिए उपयोग में लायी जाती है। डोंगेश्वर महादेव के विकास के लिए एक पंजीकृत

"जय डोंगेश्वर महादेव चोड़राधाम समिति" सतत् प्रयासरत है। डोंगेश्वर महादेव में वर्ष में तीन बार मेला भरता है। प्रथम कार्तिक पूर्णिमा को, द्वितीय महाशिवरात्रि व तृतीय चैत्र कृष्ण पक्ष में तेरस को। यहां मेला का स्वरूप अभी विस्तार नहीं पाया है, लेकिन शीघ्र ही यहाँ वृहद् रूप से मेला आयोजन की संभावना दिखलाई पड़ती है। डोंगेश्वर महादेव में चैत्र-नवरात्रि पर्व व क्वांर-नवरात्रि में जंवारा-जोत भी जलाया जाता है। मनोकामना पूर्ति के लिए दूर-दूर से लोग यहां आकर मनौती मनाते हैं। गण्डई (नर्मदा)- बालाघाट मार्ग में होने के कारण यहाँ लोगों का आना-जाना हमेशा लगा रहता है। दूर-दूर से आने वाले लोग यहाँ आकर प्राकृतिक सौन्दर्य का आनंद लेकर ही गन्तव्य की ओर आगे बढ़ते हैं।

डोंगेश्वर महादेव के आसपास और भी कई दर्शनीय स्थल हैं जैसे-पैलीमेटा की रासडोंगरी, पैलीमेटा का सुरही जलाशय और मगरकुण्ड का बावहनपाट। ये सभी स्थान यहाँ से 5-6 कि.मी. के इर्दगिर्द हैं। प्रकृति के रहस्य व रोमांच से भरी प्राकृतिक गुफा मंडीप खोल की दूरी यहाँ से लगभग 15 कि.मी. है। यहाँ आकर इसकी भी आनंदानुभूति की जा सकती है। वैसे यह अंचल अपनी प्राकृतिक सुषमा के लिए प्रसिद्ध है। डोंगेश्वर महादेव की खुशनुमा वादियों से प्रभावित होकर अनेक फिल्म निर्माताओं ने यहाँ आकर सीडी एलबमों की शूटिंग की है। अक्सर यहाँ शूटिंग का कार्य चलते रहता है। पैलीमेटा बांध की अपार जलराशि की हिलोरें आँखों को संतृप्त करती है। ऊँचे-ऊँचे पहाड़ और प्रकृति की शोभा को देखकर मन आनंदित होता है।

कुल मिलाकर डोंगेश्वर महादेव की यात्रा क्लान्त, अशान्त तन-तन को प्रकृति के रंग में रंग देती है। और जीवन में नए उत्साह का संचार करती है। हो न भी क्यों ? प्रकृति का कार्य ही है हृदय को प्रमुदित करना। शर्त यही है कि मनुष्य प्रकृति से जुड़कर रहे और पर्यावरण को सुरक्षित और संरक्षित रखे। ❑

गंडई का भाँड़ देऊर : जहाँ पाषाण बोलते हैं

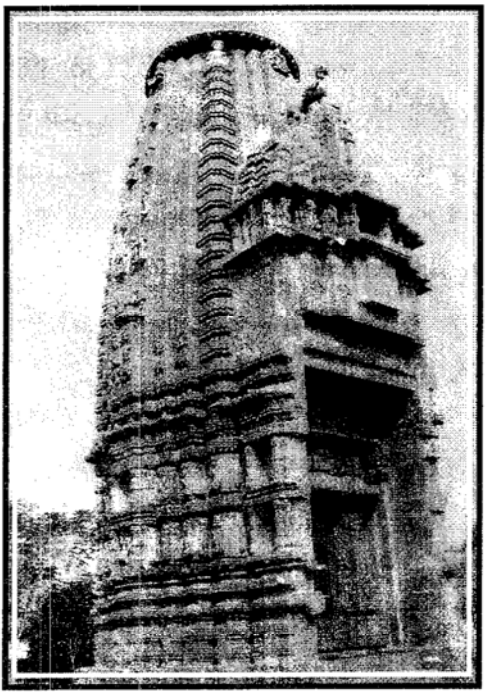

छत्तीसगढ़ प्राचीनकाल से आस्था का केन्द्र बिन्दु रहा है। भोरमदेव, आरंग, जांजगीर, देवबलोदा, बारसुर, जैसे अनेक पुरातात्विक स्थलों का अपना पृथक-पृथक ऐतिहासिक, साँस्कृतिक और पुरातात्विक महत्व है। यहाँ के मंदिरों में उत्कीर्ण शिल्पांकन तत्कालीन समाज की धार्मिक व सांस्कृतिक स्थितियों के जीवन्त साक्ष्य हैं। ये मूक होकर भी बोलते हैं । आवश्यकता केवल उनकी मूक भाषा को समझने की है। छत्तीसगढ़ के कोने-कोने में अनेक मंदिर इतिहास, कला व संस्कृति के साक्षी के रूप में विद्यमान हैं। ऐसा ही एक भव्य व प्राचीन शिवमंदिर

गण्डई जिला-राजनांदगांव में स्थित है।

गण्डई, राजनांदगांव जिले का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पुरातात्विक स्थल है। यहां आसपास अनेक प्राचीन मंदिर व प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण स्थान हैं। गण्डई का शिव मंदिर टिकरीपारा, वार्ड नं. 14 में स्थित है। यह मंदिर इस अंचल में "भांड़ देउर" के नाम से विख्यात है। भांड़ छत्तीसगढ़ शब्द भठ से व्युत्पन्न है। जिसका अर्थ है- भग्न या गिरा हुआ और देउर का अर्थ - देवालय से है। भांड़ देउर अर्थात् ऐसा देवालय जो भग्न हो। कालान्तर में यह मंदिर भग्न था । जिसे केन्द्रीय पुरातत्व विभाग ने संरक्षित कर पुनर्निर्मित किया है। पुनर्निर्माण के चिन्ह आज भी इस मंदिर में स्पष्टतः परीलक्षित होते हैं। मंदिर स्थापत्य की दृष्टि से पुरातत्व-वेत्ता इस मंदिर को भग्न मानते हैं । क्योंकि इस मंदिर का अन्तराल व महा मंडप नहीं है। केवल गर्भगृह व विमान ही शेष है। पर जो है वह अतिसुन्दर और कलात्मक है। मंदिर की निर्माण शैली व स्थापत्य कला की दृष्टि से पुरातत्ववेत्ताओं ने इस मंदिर को कल्चुरिकाल में 11 वीं-12 वीं शताब्दी में निर्मित माना है। यह मंदिर भोरमदेव मंदिर का समकालीन है तथा भोरमदेव मंदिर की तरह भव्य एवं मूर्तिकला की दृष्टि से समुन्नत है। नागरशैली में निर्मित यह पंचरथ प्रकार का व पूर्वाभिमुखी है। इस मंदिर में महा मंडप नहीं है, किन्तु अंतराल का कुछ भाग सुरक्षित है। इससे यह प्रमाणित होता है कि मंदिर का महा मंडप व अन्तराल भी भव्य और अलंकरण युक्त रहा होगा। मंदिर के सम्मुख नंदी की अलंकारिक पश्चिमाभिमुख प्रतिमा स्थापित है। आंशिक रूप से सुरक्षित अन्तराल के ऊपर पृथक शिखर स्थापित है। इस शिखर में ज्यामितीय आकृतियाँ व पुष्प वल्लरियों के साथ नारी मूर्तियाँ विद्यमान हैं। शीर्ष में गर्जन की मुद्रा में सिंह विराजमान है, जिसकी भव्यता कला प्रेमियों को सम्मोहित करती है।

ललौंहे पत्थर से निर्मित मंदिर का प्रवेश द्वार सर्वाधिक अलंकृत है। लगता है इस भाग में शिल्पियों ने मूर्तियों में कोई लेप किया है अथवा महीन घिसाई की है, जिसके कारण ही यह भाग आभामय है। किरणें पड़ती हैं तो एक अलौलिक चमक पैदा होती है। निर्माणकाल से लेकर वह चमक आज भी सुरक्षित है। इसकी भव्यता और सजीवता शिल्पी की कल्पनाशीलता और उसकी कला कुशलता को मुखरित करती है। प्रवेश द्वार का शिल्पांकन अद्वितीय है। प्रवेश द्वार के अधोभाग में प्रस्तर खंडों पर उत्कीर्ण वादन रत व नृत्य रत नर-नारियों की मूर्तियां लघु रूप में भी होकर कला की सूक्ष्म भाव-भंगिमा व उसकी निपुणता के भव्य रूप को उद्घाटित करती हैं। शिल्पी ने नृत्यमग्न कलाकार के पाँवों में बंधे घुंघरूओं को भी बड़ी कुशलता के साथ उकेरा है। चौखट के चारों ओर सूक्ष्म रूप से उत्कीर्ण लता-वल्लरियाँ और पुष्प-वल्लरियाँ अंकित हैं। खड़े चौखटों पर नृत्यरत मयूर शोभायमान हैं। सूक्ष्म अंकन आँखों को संतृप्त करते हैं । अधोभाग में गणेश जी व सरस्वती की छोटी किन्तु सजीव मूर्तियाँ हैं।

प्रवेश द्वार के दोनों भाग में भगवान शिव का मानुषी रूप हाथ में त्रिशूल, डमरू व सर्प के साथ प्रदर्शित है। नीचे नंदी विराजित है । अन्य मंदिरों की तरह द्वारपाल के रूप में मकरवाहिनी गंगा तथा कुर्म वाहिनी यमुना का सुन्दर व सजीव अंकन है। इसी स्थान पर सात-सात की संख्या में नाग कन्याओं की अति सूक्ष्म आकृतियाँ अंकित हैं, जो परस्पर प्रत्येक के पृच्छ भाग से गुम्फित हैं। द्वार शाखा के सिरदल के मध य नृत्यरत गणेश जी उत्खचित हैं । प्रवेश द्वार के ऊपर की ओर क्रमशः लक्ष्मी, दुर्गा व सरस्वती की मूर्तियाँ शोभायमान हैं। प्रवेश द्वार के ऊपर भाग में पाँडव परिवार द्वारा शिवपूजन का शिल्पांकन अप्रतिम है। महाभारत में स्वर्गारोहण के पूर्व पाँडवों द्वारा महादेव के पूजन का प्रसंग

मिलता है। संभवतः यह उसी का दृश्याँकन हो। पाँडव की मूर्तियों के मध्य महिष की पीठ पर शिवलिंग की स्थापना है। दोनों पार्श्व में ऋषिगण पूजा की मुद्रा में हैं। पांडव भ्राता अपने आयुधों के साथ अंकित हैं। यहां देवी द्रोपदी व माता कुन्ती भी उपस्थित हैं। नीचे पट्टिका में इनका नामोल्लेख भी है। जो सुस्पष्ट एवं पठनीय है। माता कुन्ती का नाम यहां "कोतमा" अंकित है। यहां विचारणीय तथ्य यह है कि कुछ पुरातत्ववेत्ताओं ने महिष मूर्ति को नंदी माना है। जबकि वह मूर्ति स्पष्टतः महिष की ही परिलक्षित हो रही है। महिष की पीठ पर शिवलिंग की स्थापना और पांडव परिवार द्वारा उसकी पूजा-प्रतिष्ठा कब की गई? यह अन्वेषण का विषय है।

मंदिर के गर्भगृह में ग्रेनाइट प्रस्तर से निर्मित बड़ी जलहरी है। जिसमें शिवलिंग स्थापित है, परन्तु यह शिवलिंग मूल प्रतीत नहीं होता। क्योंकि इसकी आकृति जलहरी के अनुरूप स्वाभाविक नहीं लगती। शिवलिंग की जलप्रवाहिका उत्तर की ओर है। गर्भ गृह की दीवारें सादी, अलंकार विहीन हैं। गर्भ गृह की पश्चिमी भित्ती पर आले में करबद्ध नारी प्रतिमा है। लोग जिसकी पूजा पार्वती के रूप में करते हैं। गर्भ गृह के चारों कोनों में अलंकृत स्तंभ है। तीन भित्तियों पर छः भारवाहकों की प्रतिमाएं हैं। ऊपर का शीर्ष भाग पांच वृत्ताकार भागों में विभक्त है। जो शीर्ष की ओर क्रमशः संकीर्ण होते गये हैं। गर्भ गृह के केन्द्रीयशीर्ष पर पूर्ण विकसित कमल का अलंकरण है। यह अलंकरण बड़ा ही दर्शनीय और चित्ताकर्षक है।

मंदिर का वाह्य शिल्प अतुलनीय और अद्वितीय है। इसमें भिन्न-भिन्न विषयों और भाव-भंगिमाओं से युक्त मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। मंदिर का अधिष्ठान, जंघा, शिखर व आमलक अत्यंत ही अलंकृत है। मंदिर की जगती भूमि पर ही निर्मित है। अधिष्ठान के प्रथम भाग में ताड़ पत्रों व

पत्रावलियों का अलंकरण है। द्वितीय भाग में प्रथम गजथर है। जिसमें हाथियों को गतिशील मुद्रा में अंकित किया गया है। कहीं हाथी युद्ध की मुद्रा में हैं तो कहीं तरू-पल्लवों के साथ क्रीड़ारत। कुछ दृश्यों में शिकारियों द्वारा हाथियों के शिकार का दृश्य है। गजथर के ठीक ऊपर हय अर्थात् अश्वथर है। इस थर में विभिन्न मुद्राओं में अश्वारोहियों को अंकित किया गया है। अश्वारोही हाथ में तीर-कमान, तलवार, भाला आदि धारण किये हुए हैं। अश्वथर में कुछ मिथुन मूर्तियां भी उत्कीर्ण हैं। इन प्रस्तर खंडों में शिल्पकला का अदभुत नमूना विद्यमान है। अश्वथर के ऊपर नरथर है। नरथर में स्त्री-पुरूष की विभिन्न भाव-भंगिमाओं के साथ-साथ रामायण व कृष्णलीला से संबंधित दृश्यों का सजीव शिल्पांकन है। दक्षिण दिशा में कृष्ण द्वारा कालिया नाग का मर्दन, गोवर्धन पर्वत का धारण तथा त्रिभंग मुद्रा में बंशीवादन की मनोहारी दृश्यावलियां हैं। कुछ मिथुन मूर्तियां भी हैं। पश्चिम दिशा के नरथर में मैथुन क्रिया में रत मिथुन मूर्तियों तथा मल्ल युद्ध आदि का अंकन है। उत्तर दिशा में राम लीला से संबंधित चित्रण है। बालि-सुग्रीव युद्ध, बालि-वध, अशोक वाटिका में शोकमग्न सीता, स्फटिक शिला पर बैठे राम लक्ष्मण के सम्मुख करबद्ध हनुमान तथा वानरों का नृत्य संगीत आदि का सहज दृश्यांकन इस मंदिर के कला वैभव को द्विगुणित करता है।

मंदिर के जंघा भाग में स्तंभाकृतियां नौ-नौ भागों में विभक्त हैं। प्रस्तर खंडों की जुड़ाई इतनी कुशलतापूर्वक की गई है कि खंडों में विभक्त होने के बावजूद ये प्रस्तर खंड एक ही शिलाखंड के रूप में प्रतीत होते हैं। इनमें उत्कीर्ण मूर्तियों की भव्यता व अंकन दर्शनीय है। इस भाग में अनेक देवी-देवताओं, दशावतार, जीवन-जगत से जुड़े पहलुओं जैसे- नवयौवना, स्तनपान कराती माता, प्रेमालाप करते नर-नारी, गदाधारी व धनुषधारी सैनिकों आदि की सुन्दर मूर्तियां उत्खचित हैं। उपरोक्त

शिल्पांकन तत्कालीन समाज की स्थितियों और मानवीय संबंधों का प्रकटीकरण करते हैं। जंघा में आलों का भी निर्माण हुआ है। जिसमें केवल तीन आलों में काल भैरव, सती स्तंभ व महिषासुर मर्दनी की भव्य मूर्तियां हैं। शेष सात आले रिक्त हैं।

मंदिर का शिखर भाग भी अनेक अलंकरणों से परिपूर्ण है। शिखर के निचले भाग में तीनों दिशाओं उत्तर, पश्चिम व दक्षिण में एक-एक मंदिर का शिरांग आमलक कलश निर्मित है। जिनमें मूर्तियों के तीन थर हैं। अश्वारोही थर, नरथर में कृष्ण की बंशीवादन में लीन सम्मोहित करती मूर्तियां व तृतीय थर में नायिका की दो मूर्तियां हैं। शिखर के शीर्ष भाग में चारों कोनो में देवपुरूष उत्कीर्ण हैं। शीश पर पगड़ी बांधे गंभीर भाव लिये ये मूर्तियां बड़ी भव्य हैं। इसके साथ ही शिखर में ज्यामितीय आकृतियों की बहुलता है। शिखर के शीर्ष पर वृत्ताकार आमलक संपूर्ण मंदिर को भव्यता प्रदान करता है। इस आमलक के ऊपर क्रमशः पाँच लघु आमलकों की श्रृंखला के पश्चात प्रस्तर कलश स्थापित है।

अद्‌भुत कलात्मक व अलंकरण युक्त ये मूर्तियाँ इस मंदिर के वैभव हैं, और यह मंदिर वैभव है इस अंचल का, इस जिले का और संपूर्ण छत्तीसगढ़ का। जहाँ पुरातात्विक संपदा आज संरक्षित और सुरक्षित रूप में कला-संस्कृति और इतिहास का गौरव-गान कर रही है। प्रस्तरों में उत्कीर्ण मूर्तियाँ हमारी आस्था, श्रद्धा-विश्वास और हमारे जीवन के विभिन्न क्रिया व्यवहारों तथा भाव-भंगिमाओं के गीत गा रही हैं। ये पाषाण सही, पर बोलते हैं। जीवन में मधुरस घोलते हैं। यहाँ अंजान शिल्पियों ने भावनाओं और कल्पनाओं को हथोड़े व छेनी के माध्यम से प्रस्तर खंडों पर उत्कीर्ण कर कला को अमर कर दिया है। जिसे विश्वास न हो, वो यहां आये, देखे-सुने और अनुभव करे। यहाँ पाषाण बोलते हैं।□

घटियारी का पुरातात्विक वैभव

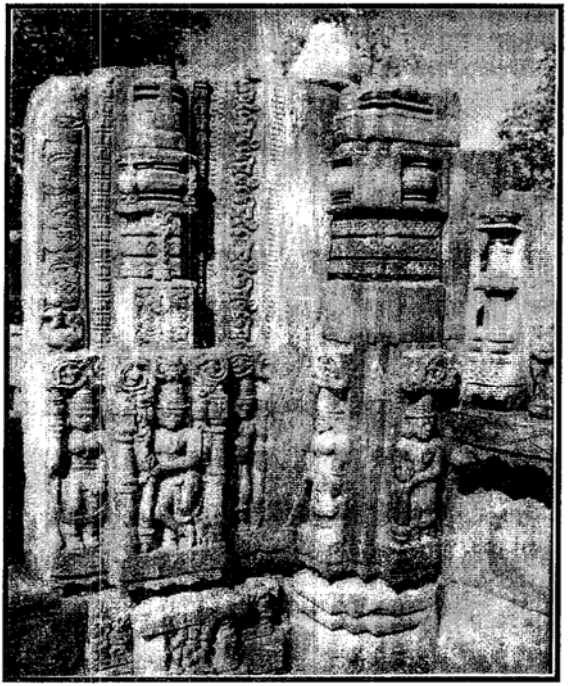

छत्तीसगढ़ की धरती पुरातात्विक धरोहरों की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है। यहां पुरातात्विक महत्व के अनेक केन्द्र हैं। जिन पुरातात्विक स्थानों पर पुरातत्ववेत्ताओं का ध्यान अधिक आकृष्ट हुआ, जिनको ज्यादा प्रचार-प्रसार मिला वे स्थान लोगों की नजरों में आये और गौरव के केन्द्र बने। जिन पर लोगों का ध्यान नहीं गया या कम गया वे स्थान कम प्रचारित हुए, किन्तु अप्रचारित इन स्थानों का महत्व पुरातात्विक दृष्टि से किसी भी माने में कम नहीं है। जिनमें से घटियारी भी एक है। आवश्यकता है इसके समुचित उत्खनन व आकलन की।

घटियारी राजनांदगांव जिला मुख्यालय से 72 कि.मी. दूर गण्डई के पश्चिम भाग में 5 कि.मी. दूरी पर स्थित है। गण्डई-कोपेभांठा से

सुरही नदी को पार कर, पक्की सड़क तो नहीं है पर सुगमता से घटियारी पहुंचा जा सकता है। गण्डई क्षेत्र का अतीत गौरवशाली रहा है। यह प्राचीनकाल से कला संस्कृति व पुरातत्व का केन्द्र रहा है। गण्डई के आसपास के अनेक गांवों में पुरा संपदा बिखरी पड़ी है। ये पुरासंपदा इस बात के प्रमाण हैं, जिसका एक साक्षी है घटियारी।

वैसे तो घटियारी वर्तमान में आबादी विहीन है। आबादी की दृष्टि से इसके पूर्व में है ग्राम बिरखा व उत्तर में ग्राम कटंगी तथा पश्चिम में घने जंगल घटियारी से ही प्रारंभ हेाता है। ये दोनों गांव बिरखा व कटंगी में भी पुरावशेषों के भंडार हैं। घटियारी में कुल्चुरिकालीन 10वीं - 11वीं ई. में निर्मित शिव मंदिर के भग्नावशेष प्रचुर मात्रा में बिखरे पड़े हैं। राज्य सरकार द्वारा सन् 1978-79 में यहां उत्खनन कार्य किया गया। जिसमें सैकड़ों की संख्या में कलात्मक प्रस्तर मूर्तियों व मंदिरों के वास्तुखंड प्राप्त हुए हैं। तब से यह मंदिर पुरातत्व विभाग द्वारा संरक्षित है। वर्तमान में मंदिर का थर भाग एवं द्वार शाखाएं ही सुरक्षित हैं। प्राकृतिक कारणों से यह भले ही बिखर गया है। पर जो भी शेष है वह बड़ा ही आह्लादकारी व प्राचीन कला संस्कृति के स्वर्णिम अध्याय का स्वमेव उदाहरण हैं । बालुई व ललौंहें प्रस्तर से निर्मित यह मंदिर निश्चित रूप से भोरमदेव की तरह भव्य, विशाल और कलात्मकता से परिपूर्ण रहा होगा। पुरातत्व वेत्ताओं के अनुसार यह मंदिर भोरमदेव का समकालीन है तथा कवर्धा के फणि नागवंशीय राजाओं द्वारा निर्मित प्रतीत होता है। यह फणि नागवंश कालीन मंदिर वास्तु का परिचायक है। घटियारी के शिव मंदिर व गण्डई टिकरीपारा के भाड़ देऊर मंदिर के निर्माण व शिल्प में काफी साम्यता है।

घटियारी का प्राचीन शिवमंदिर प्रस्तर निर्मित व पूर्वाभिमुखी है। वर्तमान में इस मंदिर के मंडप, अन्तराल और गर्भगृह के प्रस्तरखंड यहां मौजूद हैं। इन प्रस्तर खंडों को देखकर यह सहज अनुमान लगता है कि

इस मंदिर में भोरमदेव मंदिर की ही तरह महामंडप तथा तीनों ओर मुखमंडप निर्मित रहे होंगे। मुख्य मंदिर के उत्तर, दक्षिण व पूर्व में भी अनेक शिवमंदिरों के ध्वस्त अवशेषों के साथ-साथ जलहरी व शिवलिंग प्राप्त हुए हैं। जो परवर्तीकाल में निर्मित जान पड़ते हैं। घटियारी के भग्नावशेषों को देखकर ही इसकी भव्यता और विशालता का आंकलन किया जा सकता है। इसकी इसी विलक्षणता के कारण पुरात्व वेत्ताओं ने इस मंदिर को मंदिर नहीं बल्कि महामंदिर होने की कल्पना की है। पंचरथ शैली के इस मंदिर के अभिमुख नंदी की विशाल और अलंकारिक प्रतिमा सुशोभित है। नंदी की पीठ पर उत्कीर्ण घंटियों का शिल्प सौन्दर्य आंखों को संतृप्त कर देता है और शिल्पी की प्रशंसा के लिए अनायास देखने वालों के मुंह से वाह-वाह के स्वर फूट पड़ते हैं।

इस नंदी को देखकर मेरा मन आज भी रोमांचित हो उठता है और बचपन की स्मृतियों में खो जाता है। बात तब की है जब मैं विद्यार्थी था। 8वीं-9वीं में पढ़ता था। तब इस जंगल में अघुवा बनकर भौजी की

लकड़ी लेने के लिए जाता था। गांव की महिलाओं के साथ हमारी बड़ी भौजी लकड़ी लाने जंगल जाती थी। तब हम पड़ोस के बच्चे घटियारी तक जाते थे। उनके बोझा से कुछ लकड़ी निकालकर स्वयं लाते थे । इससे उनका बोझ हल्का हो जाता था। अब भी लोग अघुवा जाते हैं। तब हम बच्चे लकड़हारिनों का इंतजार करते। घटियारी तालाब के किनारे पास के टीले पर (जिस टीले की खुदाई से मंदिर के पुरावशेष प्राप्त हुए हैं) खेलते थे। वहीं पर नंदी की मूर्ति थी। लोहे का बना एक टेपरा था। हम बच्चे उसी नंदी की पूजा करते, टेपरा बजाते और तब तक खेलते रहते जब तक कि लकड़हारिनें हमें पुकारती नहीं थीं। बालमन की स्मृतियां इस मंदिर को देखकर आज भी मन को आनंदित कर देती हैं। तब किसी को ऐसा कहां अनुमान था कि उस टीले में हमारी यह पुरा संपदा छिपी है। घटियारी की पुरातात्विक आभा के साथ-साथ सागौन व पलास वृक्षों से आच्छादित इसकी प्राकृतिक शोभा बड़ी निराली थी। अरे मैं तो स्मृतियों में खो गया।

आईये प्रवेश करें मंदिर प्रांगण में और देखें मंदिर की द्वार शाखाओं को। वर्तमान में मंदिर प्रांगण में पुरातत्व विभाग द्वारा यहां प्राप्त पद्मास्थ राजपुरूष, गणेश, खडगासनास्थ तीर्थंकर, स्थानक विष्णु, योद्धा, प्रतीक्षारत नायिका, गवाक्ष, चामरधारिणी, शिवलिंग पूजनरत उपासिका, राम-हनुमान, महिषासुर मर्दनी आदि की महत्वपूर्ण प्रतिमाएँ मंदिर प्राँगण में चबूतरों में स्थापित की गई हैं। घटियारी शिवमंदिर की द्वारशाखाएँ अत्यंत ही अलंकृत हैं। शिल्पकार ने अपनी कला की अद्भूत और अलौलिक छवि को प्रस्तरों पर सजीव कर दिया है। शिलाखंडों पर नृत्यांगनाओं व वादकों की मूर्तियाँ जीवंत प्रतीत होती हैं। चौखट पर उत्कीर्ण लता वल्लरियों व नृत्यरत मयूरों का शिल्पांकन बड़ी सूक्ष्मता के साथ किया गया है। अधोभाग में गणेश जी, सरस्वती जी, नाग कन्याओं व कीर्तिमुख की अलंकारिक मूर्तियाँ उत्खचित हैं। प्रवेश द्वार के दोनों भाग

में भगवान शिव व पार्वती की मूर्तियों हैं। नीचे नंदी विराजित है। दोनों ओर सहचर भी खड़े हैं तथा द्वारपालों के साथ-साथ कलश धारण किये गंगा यमुना की मूर्तियां भी इस भाग में उत्कीर्ण हैं। द्वारशाखा का सिरदल गिरकर नीचे पड़ा हुआ है। सिरदल में भी बड़ा ही नयनाभिराम शिल्पांकन है।

गर्भगृह में प्रवेश करने के लिए छः सीढ़ियाँ उतरनी पड़ती हैं। गर्भगृह में कृष्ण प्रस्तर से निर्मित विशाल जलहरी है। जिसमें शिवलिंग स्थापित है। किन्तु यह शिवलिंग वास्तविक न होकर कृत्रिम है। क्योंकि स्थापित शिवलिंग जलहरी के अनुपात में छोटा है। शिवलिंग में चढ़े जल के लिए प्रवाहिका की दिशा उत्तर की ओर है। गर्भ गृह की भित्तियाँ अलंकार विहीन हैं। केवल पश्चिम दिशा की दीवार में एक आले में गणेश जी की भव्य मूर्ति विराजित है। घटियारी मंदिर के पास दो और टीले हैं। जिनके उत्खनन से इस मंदिर का पुरातात्विक महत्व और भी अधिक सुदृढ़ होगा। सागौन वृक्षों से घिरे ये टीले अपने गर्भ में महत्वपूर्ण जानकारियाँ समेटे हुए हैं।

इन मंदिरों व मूर्तियों के अतिरिक्त घटियारी क्षेत्र के आसपास और भी अनेकों अलंकारिक मूर्तियाँ व वास्तुखंड बिखरे पड़े हैं। इससे यह अंदाज लगता है कि अतीत में यहां समृद्ध और गौरवशाली नगर रहा होगा। जो प्रकृति के थपेड़ों के कारण विनष्ट हो चुका है। आईये घटियारी से लगे उन स्थानों का भी भ्रमण करें, जहाँ प्रचुर मात्रा में पुरासंपदा बिखरी पड़ी है।

बिरखा- बिरखा गाँव, गण्डई से 4 कि.मी. पश्चिम व घटियारी से 1 कि.मी. पूर्व में स्थित है। घटियारी जाने के लिए बिरखा ही प्रवेश द्वार है। स्थानीय लोगों की मान्यता है कि बिरखा ही महाभारतकालीन विराट नगर है। बिरखा के नवनिर्मित शीतला मंदिर में विराजित काले ग्रेनाइट प्रस्तर में उत्कीर्ण चतुर्भुजी देवी की बड़ी सजीव व सुन्दर प्रतिमा है, जो

आसनस्थ है। इसका ऊपरी दाँया हाथ खंडित है । नीचे हाथ में अक्ष माला तथा ऊपरी बांये हाथ में दर्पण व निचला हाथ वर मुद्रा में है। ललितासन इस चतुर्भुजी देवी के पद तल में तीन मानव मस्तिष्क व तीन ऊंटों का शिल्पांकन नई जिज्ञासा पैदा करता है। दोनों ओर उपासिकाएं उत्कीर्ण हैं। इसी मंदिर में एक और भव्य व अलौकिक प्रतिमा है, जिसमें पांच पुरूष शरीर के साथ एक ही सिर जुड़ा हुआ है। किसी भी ओर से देखने पर वह पांच मूर्तियां पूर्ण रूप से दिखायी पड़ती हैं। इस तरह की प्रतिमा अन्यत्र शायद ही हो। बिरखा में एक प्राचीन कुआं है, लोग इसे बीहर कुआं कहते हैं। क्योंकि यह स्थान सागौन, मोखला व पलाश आदि वृक्षों की सघनता के कारण बीहड़ जंगल के रूप में है। यह कुआं भी अपने भीतर अतीत का गौरव छुपाये हुए है। यहीं पर दो अन्य टीले हैं। इन टीलों के उत्खनन से यहां के समृद्ध इतिहास और कला पर प्रकाश पड़ेगा। कृतबांस में भी वास्तुखण्ड बिखरे पड़े हैं।

कटंगी- घटियारी के उत्तर में 1 कि.मी. की दूरी पर स्थित है कटंगी गाँव। कमल फूलों से आच्छादित तालाब के किनारे प्राचीन मंदिरों

के भग्नावशेष बिखरे पड़े हैं। यहाँ उपलब्ध प्रतिमाओं व वास्तुखंडों के

आधार पर यह कहा जा सकता है कि यहां भी दो विशाल मंदिर रहे होंगे। एक शिव का व दूसरा विष्णु का। वर्तमान में यहां चर्तुभुजी विष्णु की भव्य व अलौलिक स्थानक प्रतिमा है। काले ग्रेनाइट पत्थर से निर्मित यह विष्णु प्रतिमा बड़ी मनोहारी है।शंख, गदा, चक्र पद्मधारण किये इस मूर्ति का अंलकरण शिल्पी द्वारा बड़े मनोयोग और सूक्ष्मता के साथ किया गया है। इससे लगी हुई लक्ष्मी की खंडित मूर्ति है। यहां गणेश जी की भी विशाल मूर्ति है। इसके साथ ही सरस्वती, अलंकृत नंदी, आसनस्थ उपासक, कुंडलित नाग पुरूष आदि की प्रतिमाएं यहां विद्यमान हैं। दूसरे भग्न मंदिर में काले पत्थर की एक बड़ी जलहरी स्थापित है जिसमें शिवलिंग नहीं है।

भड़भड़ी- घटियारी से लगभग 2 कि.मी. दूर दक्षिण दिशा में सुरही नदी के किनारे स्थित है भड़भड़ी। यह एक मनोरम प्राकृतिक स्थल है। यहीं पर एक एनीकट बना हुआ है, जिसके कारण लोग यहां अक्सर भ्रमण के लिए आते हैं। प्राकृतिक सुन्दरता से परिपूर्ण इस स्थान पर अनेकों प्राचीन मूर्तियां व भग्न मंदिर के अवशेष प्राप्त हुए हैं। इनमें प्रमुख है- दुरपता की प्रतिमा। पुरातत्व वेत्ताओं के अनुसार यह मूलतः कमला अर्थात् लक्ष्मी की मूर्ति है। इस देवी के हाथों में पद्म एवं गदा विराजित है। नीचे के हाथ भग्न हैं जिसे कृत्रिम रूप से पुनर्निमित किया गया है। गले से लेकर पैरों तक वैजयन्ती माला सुशोभित है। नीचे भाग में एक ओर आराधक तथा दूसरी ओर सिंह का अंकन है। यह मूर्ति बड़ी भव्य, अलंकारिक और मनोरम है। किन्तु स्थानीय जन लोक आस्था के कारण इसे दुरपता अर्थात् द्रोपदी देवी मानकर इसकी पूजा करते हैं। आस्थावश लोगों ने इस मूर्ति को बंदन से पोतकर, चांदी की आंखे लगाकर व नथ पहनाकर इसे नारी परिधान से श्रृँगारित कर आवृत्त कर दिया है। यहाँ पर अन्य देवी-देवताओं की भी खंडित प्रतिमायें विद्यमान हैं। भड़भड़ी के पश्चिम में 4 किमी. दूर घने जंगल के बीच भंवरदाह नामक स्थान पर

भी कुछ प्रतिमाएँ बिखरी पड़ी हैं। घटियारी व आसपास के क्षेत्रों में प्राप्त इन पुरातात्विक महत्व के भग्न मंदिरों व मूर्तियों के संरक्षण-संवर्धन के लिए स्थानीय लोगों ने ग्राम धरोहर समिति घटियारी बिरखा (गंडई) का निर्माण कर अपनी जागरूकता और अपने कला प्रेम का परिचय दिया है। समिति के द्वारा विगत तीन वर्षों से महाशिवरात्रि के अवसर पर वृहद् मेला व घटियारी महोत्सव का आयोजन किया जा रहा है। घटियारी महोत्सव में अंचल के लगभग 200 लोक कलाकारों की सहभागिता होती है। जिसमें छत्तीसगढ़ के लोकगीत, लोकनृत्य, लोक नाट्य यथा-सुवा, करमा, ददरिया, पंथी, पंडवानी, भरथरी, राऊत नाचा, बांसगीत, जसगीत, नाचा आदि की मनमोहक प्रस्तुतियाँ देकर छत्तीसगढ़ी लोक कला और लोक कलाकारों को प्रोत्साहित किया जाता है।

कल्चुरिकालीन मंदिरों और कलाकृतियों से यह क्षेत्र अटा पड़ा है। इस क्षेत्र के मंदिरों की विशालता का अनुमान यहां बिखरे वास्तुखंडों से सहज लगाया जा सकता है। छत्तीसगढ़ शासन पुरातत्व विभाग द्वारा इन वास्तुखंडों व भग्न मंदिरों के संरक्षण के लिए कांटेदार चहारदीवारी का निर्माण किया गया है। किन्तु इतना ही पर्याप्त नहीं है। यहाँ की अनमोल कलाकृतियों व मंदिरों के भग्नावशेष को सुरक्षित व संरक्षित रखने के लिए मुख्य मंदिर के ऊपर टीनशेड व मूर्तियों के लिए संग्रहालय की आवश्यता है।

ये मंदिर, ये मूर्तियाँ हमारे गौरवशाली इतिहास, कला और संस्कृति के साक्षी हैं। इस क्षेत्र के इन पुरातात्विक धरोहरों की सुरक्षा बहुत जरूरी है। ❑

भव्य प्राकृतिक व पुरातात्विक स्थल : भाँवरदाह

छत्तीसगढ़ की पावन धरती प्राकृतिक व पुरातात्विक दोनों ही दृष्टि से बड़ी सुसंपन्न है। यहां हर अंचल में जहां प्रकृति का असीम सौन्दर्य बिखरा है, वहीं पुरातत्व से संबंधित अनेक महत्वपूर्ण स्थलों से भी इसका कोना-कोना निखरा है। राजनांदगांव जिले का गण्डई अंचल प्रकृति व पुरातत्व की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। गण्डई अंचल को प्रकृति ने जहाँ एक ओर बड़ी उदारता के साथ संवारा-सजाया है और अपनी सुषमा को लुटाया है। तो दूसरी ओर प्रकृति पुत्रों ने भी अपनी कला और संस्कृति के माध्यम से इस अंचल की माटी को महकाया है। चाहे वह टिकरीपारा गंडई का 10वीं-11वीं ईस्वी में निर्मित कल्चुरिकालीन प्राचीन शिवमंदिर हो या घटियारी कटंगी का शिवमंदिर। नर्मदा मंदिर नर्मदा, गंगई मंदिर गंडई के साथ ही इस अंचल में बिखरे सैकड़ों पुरातात्विक

वास्तुखण्ड इस बात के मूक साक्षी हैं। गंडई अंचल में प्रकृति व पुरातत्व का आनंद सदैव सुलभ है। प्रकृति व पुरातत्व से परिपूर्ण ऐसा ही एक स्थल है- भांवर दाह।

भांवर दाह गंडई से लगभग 8 कि.मी. की दूरी पर पश्चिम दिशा में घने जंगलों के बीच स्थित है। भाँवरदाह यहाँ का प्राचीन व महत्वपूर्ण पूजास्थल है, जिसका संबंध गंडई जमीदारी व यहाँ की लोक आस्था से जुड़ा है। भांवर दाह का नाम पहिली बार सुनने पर उसका आशय समझ नही आता, किन्तु कृष्णलीला में वर्णित कालिया दाह से अर्थ साम्य करने से भांवर दाह अपने आप स्पष्ट हो जाता है। दाह यानी दाहरा। नदी का वह स्थान जहां अथाह जलराशि हो, जहाँ पानी गहरा हो। जिस दाहरा में कालिया नाग का निवास था। वह स्थान कालिया दाह कहलाया। ठीक उसी प्रकार इस दाहरा में भांवर अर्थात भ्रमर, मधुमक्खियों का निवास है। अतः यह स्थान ही है भांवर दाह। हां, भांवर दाह में आज भी मधुमक्खियों के असंख्य छत्ते पहाड़ की चट्टनों पर लटके हैं। इसलिए इस स्थान का नाम भांवरदाह पड़ा।

छत्तीसगढ़ी में मधुमक्खी को भांवर कहा जाता है। भाँवर देवी का ही रूप है। देवी के जिन रूपों व नामों का उल्लेख पुराणों में हुआ है, उनमें भ्रामरी देवी भी एक है। भ्रामरी देवी गण्डई जमींदारी की कुलदेवी है। भ्रामरी देवी पर इनकी आस्था और विश्वास इनके पूर्वजों के समय से है। यह आज भी अक्षुण्ण है। भ्रामरी देवी की कृपा इन पर सदा रही है। भ्रामरी देवी के पुण्य प्रताप से ही इन पर आयी विपत्तियों का निवारण होता रहा है। इसी कारण से यह आस्था और विश्वास यहां लोक में परिव्याप्त हो गया है। भांवरदाह पहुंचने के पूर्व रास्ते में भड़भड़ी नामक एक सुन्दर स्थान है, जहाँ पर प्रकृति का वैभव अपनी संपूर्णता के साथ विद्यमान है। हरे-भरे पेड़, छोटी पहाड़ियाँ, सिंचाई के लिए बना एनीकट और फिर थोड़ी दूर पर दुरपता देवी की विशाल और अलौकिक प्राचीन

प्रस्तर प्रतिमा, कलान्त हृदय को असीम शांति देती है। भड़भड़ी से ही प्रारंभ होता है भांवरदाह का वन मार्ग। कल-कल निनाद करती, दो पहाड़ियों के बीच बहती सुरही नदी का शीतल जल मन को आनंद और उमंग से भर देता है।शीतल जल का स्पर्श पाकर पथिक का तन-मन पुलकित हो जाता है। हवा के झोंको में लहराते, गीते गाते पेड़-पौधे, कलर व करते पक्षियों का झुण्ड, और कभी चौंकड़ी भरते हिरणों का समूह आंखों को संतृप्त करता है। वहीं वन फूलों की महक से मन आह्लादित हो जाता है। यहाँ सुरही नदी के दोनों किनारों के साथ ही बीच धारा में कउहा (अर्जुन) वृक्षों की सघनता है। इस क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की वन औषधियों की भरमार है वनमार्ग से चलकर भंवरदाह तक पहुंचने पर सारी थकान यूं ही मिट जाती है और मन-प्राण नई ऊर्जा से भर जाता है। सुरही नदी का प्रवाह पश्चिम से पूर्व दिशा की ओर है। यह मोहगांव के पास की पहाड़ी से निकलर शिवनाथ की गोद में समा जाती है। यह छोटी किन्तु महत्वपूर्ण नदी है। उद्गम से लेकर संगम तक इसके दोनों किनारों पर अनेकों पुरातात्विक प्राचीन मंदिर और महत्वपूर्ण स्थान हैं। भांवरदाह उनमें से एक है। भांवरदाह के पास नदी का पाट अन्य स्थानों की अपेक्षा अधिक चौड़ी है। नदी के किनारे विशाल चट्टानों पर मधुमक्खियों के असंख्य छत्ते हैं। लोग इसी भांवरदाह का दर्शन कर धन्य होते हैं। मधुमक्ख्यां दर्शनार्थियों को किसी तरह का नुकसान नहीं पहुंचाती। बर्शते कि हृदय शुद्ध हो, मन में मधुरस का लालच न हो या उन्हें कोई छेड़े न। कभी-कभी कुछ लोग शहद के लालच में रात में आकर छत्तों में आग लगाकर शहद निचोड़ लेते हैं। चट्टानों के नीचे दाहरा यानि अथाह जल राशि है। कहते हैं कि इस दाहरा में एक मंदिर था । मंदिर के विषय में इस अंचल में यह किवदंती प्रचलित है कि गण्डई जमींदारी के एक राजा जो यहाँ विशेष पर्वों पर एक विशेष अस्त्र लेकर भांवरदाह की पूजा-अर्चना के लिए आते थे, तब जल के भीतर स्थित

मंदिर में आने-जाने के लिए स्वयं जलदेवता राजा के लिए रास्ता छोड़ देते थे। तब राजा वहां जाकर पूजा करते थे। एक बार राजा शीघ्रतावश वह अस्त्र वहीं भूल गये। कहते हैं कि तब से मंदिर का वह कपाट चट्टानों से बन्द हो गया और मंदिर भी अथाह जल राशि में विलुप्त हो गया ।

भ्रामरी देवी की महिमा के संबंध में जानकर लोग बताते हैं कि एक समय प्रथम नर्मदा स्नान को लेकर गण्डई व खैरागढ़ की रानियों के मध्य विवाद हो गया था। फलस्वरूप युद्ध की स्थिति बन गई। तब गण्डई छोटी जमींदारी थी और खैरागढ़ बड़ी रियायत। खैरागढ़ के पास अपार सैन्य शक्ति थी। युद्ध की स्थिति में असहाय गण्डई की तत्कालीन रानी लक्ष्मीबाई ने भांवरदाह अर्थात् भ्रामरी देवी का स्मरण कर रक्षा की प्रार्थना

की । तब भांवरदाह से उड़कर मधुमक्खियों के समूह ने खैरागढ़ की सेना पर हमला किया था। मधुमक्खियों के काटने से शत्रु सेना भाग खड़ी हुई थी। इस तरह से उस समय गण्डई जमींदारी के मान-सम्मान की रक्षा हुई थी। जमींदार साहब के पारिवारिक सूत्रों के अनुसार आज भी कोई सुख या दुख का अवसर हो भांवरदाह से मधुमक्खियाँ राजमहल में आती हैं और मंडरा कर चली जाती हैं। भ्रामरी देवी उनकी कुलदेवी जो ठहरी। यह सब आस्था और विश्वास का ही प्रतीक है।

भांवरदाह में आज जहाँ सागौन के असंख्य वृक्ष हैं वहां पुराने समय में बाजार लगता था। उस स्थान को आज भी हटवारा कहा जाता है। हटवारा के पहले सुरही नदी में गोंदली धोवा घाट है। पास ही भालू मांड़ा है। यदा-कदा लोगों का सामना भालुओं से हो जाया करता है। भांवरदाह में गद्दीनुमा चट्टानें हैं जहाँ पुराने समय में राजाओं को टीका, सम्मान भेंट दिया जाता था। भांवरदाह के पास सुरही नदी के जल के स्वाद की बात ही निराली है, क्योंकि मधुमक्खियों के छत्तों से शहद की बूंदे भांवरदाह के जल में टपकती रहती हैं। तथा सुरही नदी का जल अर्जुन वृक्षों की जड़ों से प्रवाहित होने के कारण यहाँ का जल आरोग्यप्रद जान पड़ता है।

भांवरदाह का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष है उसका पुरातत्व से संबंध। भांवरदाह में अनेक पुरातात्विक महत्व की प्राचीन मूर्तियाँ खंडित रूप में विद्यमान हैं , इससे यह आभास होता है कि यहाँ कोई प्राचीन मंदिर रहा होगा। सागौन वृक्ष के नीचे काले-हरे ग्रेनाईट पत्थर पर उत्कीर्ण अलौकिक देव प्रतिमा है जो भगवान विष्णु की प्रतीत होती है। नीचे देवी प्रतिमा है जो संभवतः लक्ष्मी ही है। लोगों ने आस्था वश इन मूर्तियों पर बंदन का लेप चढ़ा दिया है। इस कारण से इसकी सही पहचान करना शेष है। इसी मूर्ति के निकट कलात्मक नंदी की प्रतिमा है। नंदी के मुख के नीचे एक नारी प्रतिमा है जिसके सिर पर टोकरी रखी हुई है। इसी स्थान पर

बाहुबली हनुमान की विशाल और भव्य प्रतिमा है। यह प्रतिमा भी खंडित रूप में है, किन्तु इसकी विशेषता दर्शनीय है। हनुमान की मूर्ति के निकट ही कुसुम वृक्ष के नीचे काले पत्थर की एक जलहरी है। जिसके मूल में कृत्रिम शिवलिंग है। इसी जलहरी के पास हरे ग्रेनाईट पत्थर पर उत्कीर्ण एक जैन तीर्थंकर की छोटी किन्तु दर्शनीय प्रतिमा खंडित रूप में विराजमान है । भांवरदाह में शैव, शाक्त, वैष्णव व जैन प्रतिमाओं के होने से इसका महत्व अपने आप स्पष्ट होता है। मूर्तियों के खंडित रूप को देखकर लगता है कि किसी उन्मादी या अज्ञानी व्यक्ति ने जान बूझकर इन मूर्तियों को क्षतिग्रस्त किया है। फिर भी ये मूर्तियां जिस स्थिति में हैं, इनकी सुरक्षा आवश्यक है। ये पुरातत्व की अमूल्य धरोहरें हैं। ये मूर्तियाँ शिल्पांकन की दृष्टि से 10वीं-11वीं ईस्वी में निर्मित कल्चुरिकालीन जान पड़ती हैं क्योंकि इस अंचल में भड़भड़ी, घटियारी, कटंगी, बिरखा, टिकरीपारा गण्डई में कल्चुरीकालीन अनेक मंदिर व वास्तुशिल्पों की विपुलता है।

भांवरदाह से एक फर्लांग दूर "कच्चा पघई" नामक स्थान है। कच्चा पघई पहाड़ी के शिखर पर स्थित है। शिखर के चारों ओर दृष्टि दौड़ाने पर जंगल का विहंगम दृश्य देखकर हृदय का आनंद द्विगुणित हो जाता है। एक जानकार श्री पारस सोनी के अनुसार कच्चा पघई तंत्र-मंत्र का सिद्ध स्थान है। इस स्थान पर लोग तांत्रिक सिद्धि के लिए भी आते हैं। कच्चा पघई में मृदा से निर्मित बैल व घोड़े की अलंकारिक मूर्तियाँ बिखरी पड़ी है। मिट्टी की ये मूर्तियाँ बहुत प्राचीन जान पड़ती हैं क्योंकि इन मृदा शिल्पों की बनावट विशेष प्रकार की है । भांवरदाह में इन मृदा शिल्पों के माध्यम से पुरातत्ववेत्ताओं को अन्वेषण के द्वारा नये तथ्यों की जानकारी मिल सकती है । कच्चा पघई का मतलब मिट्टी के उस कच्चे बर्तन से है जिसे कुम्हार अपनी चाक में गढ़कर उतारता है। कच्चा पघई के संबंध में यह लोक मान्यता है कि मिट्टी के कच्चे

बर्तन को इस स्थान पर रख देने से वह आप ही आप पक जाता है। पता नहीं इसमें कितनी सच्चाई है? पर पुरातत्व की दृष्टि से भांवरदाह काफी महत्वपूर्ण है। आवश्यकता है पुरातत्वविदों के यहां आने की और बिखरी पुरा सम्पदाओं को जान समझकर जन सामान्य को उनसे परिचित कराने की।

भांवरदाह को गण्डई के भूतपूर्व जमींदार लाल डोगेन्द्रशाह खुशरो ने अपने पूर्वज रानी लक्ष्मीबाई व उनके गोद पुत्र राजा रणधीर सिंह खुशरो (जन्म संवत् 1885) की स्मृति को समर्पित किया है। भांवरदाह को लोक आस्था के अनुरूप पर्यटन केन्द्र के रूप में विकसित करने के लिए उनके छोटे सुपुत्र लाल टारकेश्वर शाह खुशरो प्राणपन से संकल्पित हैं। उनके इस प्रयास को यहां के निकटस्थ ग्राम जंगलपुर, जीराटोला, दौंजरी, कटंगी, बिरखा, पंडरिया, टिकरीपारा, बहेराभाठा, गण्डई आदि के ग्रामवासियों का भरपूर सहयोग मिल रहा है। भांवरदाह में चैत्र-पूर्णिमा को जंवारा बोया जाता है और ज्योति कलश की स्थापना की जाती है, तब भांवरदाह का सारा जंगल माता की महिमा और उसकी लीलाओं के गुणगान से गूंजने लगता है। यहां भ्रामरी देवी व अन्य देवियों के जस गाये जाते हैं। दूर-दूर से आकर लोग भ्रामरी देवी के दर्शन कर भौतिकता की चकाचौंध से दूर प्रकृति का आनंद लेते हैं। वह दिन दूर नहीं जब आस्था का केन्द्र भांवरदाह एक पर्यटन केन्द्र के रूप में विकसित होगा। क्योंकि यहां लाल टारकेश्वर शाह खुशरो के नेतृत्व में पारस सोनी जैसे अनेकों उत्साही युवा और भ्रामरी देवी के भक्त भांवरदाह की सेवा में जुटे हुए हैं। भांवरदाह में प्रकृति के साथ-साथ पुरातत्व की प्राचीन मूर्तियां दर्शनीय है। इसलिए भांवरदाह को एक पर्यटन केन्द्र के रूप में विकसित करना इस अंचल की बड़ी उपलब्धि होगी। ❑

खंघार से ठंढार तक की यात्रा

व्यक्ति कभी अपने वर्तमान की सम्पन्नता से खुश होता है तो कभी विपन्नता से दुखी होता है। वर्तमान की सम्पन्नता या विपन्नता का आधार तो अतीत होता है। यही बात स्थानों के संबंध में भी लागू होती है। क्योंकि व्यक्ति और स्थान का सम्बन्ध एक-दूसरे पर आश्रित है। अक्सर गांव के लोग अपने अतीत को सतयुग और वर्तमान को कलयुग कहकर संबोधित करते हैं। यह सोच उनके अपने अनुभव पर आधारित होता है। यह निष्कर्ष है ग्राम ठंढार के 70 वर्षीय कोटवार श्री फूलदास मानिक पुरी से हुई बातों का, जो इस अंचल के सुप्रसिद्ध लोक गायक श्री अटल दास मानिकपुरी के पिता जी हैं। उनकी आंखों के सामने ग्राम ठंढार का समृद्ध वर्तमान दृष्टिगोचर हो रहा है, तो उनकी स्मृतियों में यहां का उज्जवल इतिहास भी हिलोरें लेता है। और किसी के पूछने पर वे बड़े गर्व के साथ ग्राम ठंढार के अतीत को खोलते जाते हैं। आइए उनके अनुभवों का आंनद लें और ठंढार के गौरवमयी अतीत का अवलोकन करें।

राजनांदगांव जिले का गंडई कस्बा कला-संस्कृति, पुरातत्व व प्रकृति की दृष्टि से बड़ा समृद्ध है। इसी के निकट है यह गांव। गंडई-राजनांदगांव मुख्य मार्ग पर गंडई से 3 कि.मी. दूर दक्षिण-पूर्व भाग में स्थित है- ठंढार इस क्षेत्र का बड़ा गाँव। यहाँ की आबादी लगभग दो हजार है। कृषि की दृष्टि से भरा-पूरा और संपन्न। यह बड़े किसानों की बस्ती है। यहां के लोग बड़े परिश्रमी हैं। इसलिए यहां समृद्धि है। गण्डई के तत्कालीन जमींदार व दीवान की जमीनें यहां आज भी मौजूद हैं।

ठंढार गांव का वर्तमान जितना समृद्ध है, उससे अधिक समृद्ध

उसका अतीत रहा है। इसके अतीत की समृद्धि का साक्षी है नंदी की भव्य प्रतिमा के साथ यहां पड़ी कुछ अन्य प्रतिमाएं व वास्तु खण्ड। गांव के दक्षिण भाग में तालाब के किनारे विराज मान भव्य विशाल नंदी के पास ही पुरूष व नारी की प्रस्तर प्रतिमा है। जिसे स्थानीय लोग ''लमना-लमनीन'' की मूर्ति कहते हैं। प्राचीन मूर्तियाँ में यहाँ का गौरवशाली अतीत छिपा हुआ है। आवश्यकता है उस खोजी और पुरातात्विक दृष्टि की जो यहां के इतिहास पर प्रकाश डाल सके। इसी स्थान से आधा किलोमीटर की दूरी पर बेलगांव के निकट ''भंवरपाट'' व ''भईंसासुर'' नामक स्थान है। यहां पर भी प्राचीन मूर्तियों के वास्तु खण्ड बिखरे पड़े हैं। यहाँ पर एक छोटी किन्तु अति महत्वपूर्ण चर्तुभुजी त्रिमूर्ति देव प्रतिमा पीपल वृक्ष की छाया में स्थापित है। इस देव प्रतिमा के नीचे भाग में दांए-बांए बैठी हुई नारी की प्रतिमाएँ है। जानकार लोग बताते हैं कि यहाँ पहले और कई मूर्तियाँ थीं जो संरक्षण के अभाव में गायब हो गई। इस स्थान पर किसानों के खेत में खुदाई करने पर मिट्टी के बर्तन, कौड़ी व अन्य महत्वपूर्ण सामग्रियाँ मिलती हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि पहले यहाँ कोई समृद्ध नगर या महत्वपूर्ण मंदिर रहा होगा। यह भी ध्यातव्य है कि इस अंचल में महत्वपूर्ण नर्मदा मंदिर व कुण्ड यहां से 2 कि.मी. की दूरी पर स्थित है।

अपने बुजुर्गों से सुनी हुई बातों को दुहराते हुए फूलदास मानिकपुरी बताते हैं कि नर्मदा स्रोत व नर्मदा देवी के उद्‌गम से पहले वर्तमान ठंढार गांव, बेलगांव के पास भंवर पाट व भईसासुर नामक स्थान पर बसा था। तब इसका नाम खंघार था। यहां तब पानी की समस्या थी। वर्षा व ठण्ड के दिनों में जैसे-तैसे लोगों का निर्वाह हो जाता

था। किन्तु गर्मी के महीनों में त्राहि-त्राहि मच जाती थी। उन्ही दिनों गाँव के कुछ लोगों ने देखा कि भरी दोपहर में गांव के कुछ कुत्ते पानी व कीचड़ से सने गांव की उत्तर दिशा से आ रहे हैं। उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। कुत्ते जिस मार्ग से आ रहे थे उधर जमीन पर पानी की बूंदों व कीचड़ के निशान थे। पानी की खोज मे लोगों ने उस रास्ते का अनुसरण किया, तो उनकी खुशी का ठिकाना ना रहा। कुछ ही दूर पर भरूवा काड़ी के जंगलों के बीच स्वच्छ जल से भरा तालाब व तालाब के किनारे स्वर्ण कलश से मंडित मंदिर मिला। कहते हैं कि तब खंधार गांव के सारे लोग अपने परिवार के साथ एक-एक कर वर्तमान स्थान पर आ गए। समय सबको बदल देता है। समय के साथ खंधार का नाम ठंढार हो गया।

ठंढार तालाब के किनारे स्थित नंदी तथा पुरूष व नारी की प्रतिमा है। पहले यहां पर भव्य व प्राचीन मंदिर था। उसके अवशेष आज भी विद्मान हैं। यहाँ बैल जोड़ी की तरह नंदी की प्रतिमाएँ थीं। लोगों के कथनानुसार नंदी की एक प्रतिमा नर्मदा मंदिर में स्थापित है। ठंढार में स्थापित नंदी प्रतिमा को ले जाने का भरसक प्रयास किया गया। इस प्रयास में 18 बैलगाड़ियाँ टूट गईं, लेकिन नंदी प्रतिमा को नहीं ले जाया जा सका। नर्मदा मंदिर में स्थापित प्राचीन मूर्तियों के अवलोकन के पश्चात यह आभास होता है कि निश्चित रूप से नर्मदा कुंड के उद्भव के समय मंदिर निर्माण कर ठंढार, भंवर पाट व भईंसा सुर के आस-पास की मूर्तियों को ले जाकर वहां प्रतिस्थापित किया गया है। सभी मूर्तियां 10 वीं-11वीं ई. कल्चुरि काल में निर्मित जान पड़ती हैं। यह संभावना इसलिए बनती है कि गंडई तथा घटियारी के शिवमंदिरों व आस-पास के

गांवों में बिखरे पड़े शिल्प व वास्तु खंड कल्चुरिकालीन ही हैं।

ठंढार का वर्तमान तालाब पुराने समय में पुरईन पत्तों, खोखमा (कमल) फूल व गाद से आच्छादित था। पर आज इनसे यह खाली है। तत्कालीन जमीदार स्व. लाल मुरत सिंह के जामाने में ओड़ियों द्वारा इसे विस्तृत और गहरा करने के लिए मांगा गया था। आज गांव वाले यहां अपना निस्तार करते हैं। नंदी की प्रतिमा में कनेरी, रस्सी व घंटी आदि को कलात्मक ढ़ंग से उत्कीर्ण किया गया है। नंदी के निकट चित्त पड़ी पुरूष व नारी की प्रतिमा के संबंध में जनश्रुति है कि एक बार लमना और लमनीन (पशुओं का व्यापार करने वाली विशेष जाति) अपने टांड़ (पशुओं का समूह) लेकर यहां आए थे और श्रापवश या किन्हीं कारणों से पत्थर हो गए। यहीं पर नृत्य मुद्रा में नारी प्रतिमा का आकर्षक खंडित भाग पड़ा हुआ है। जिसे लोग नंदी के मुंह का बायां भाग मानते हैं। क्योंकि नंदी के मुख का बांया भाग खंडित है। गांव वालों ने इस तालाब के किनारे शीतला मंदिर का निर्माण करवाया है। यहां ग्राम देवी ग्वालिन दाई व ग्राम देवता ठाकुरदईया भी विराजमान है। शिवरात्रि के समय यहां पर छोटा सा मेला भी भरता है। कुल मिलाकर खंघार के ठंढार रूप में परिवर्तन के पीछे यहाँ की एतिहासिक, सांस्कृतिक गौरव कथा इन मूर्तियों व वास्तु खंडों में छिपी हुई है। आवश्यकता है इन मूर्तियों के पुरातत्विक महत्व को जानने व प्रकाशित करने की। यह तभी संभव होगा जब पुरातत्व वेत्ताओं की नजर पड़े और वे इन पर सम्यक् रूचि लें। अभी तो हम यह कह ही सकते हैं कि निश्चित रूप से ठंढार के समृद्ध वर्तमान की ही तरह उसका अतीत भी समृद्ध और उज्जवल रहा होगा। ❑

मनोकामना पूर्ण करने वाली : माँ गंगई

कृषि क्षेत्र में धान की अधिक पैदावारी के लिए प्रसिद्ध गण्डई की अपनी पुरातात्विक-सांस्कृतिक-धार्मिक गरिमा है। यहां 10वीं- 11वीं सदी में निर्मित प्राचीन शिवमंदिर है। जो अपने वास्तुशिल्प के लिए चर्चित है। परंतु अधिक जन-आस्था और [illegible] केन्द्र है, माँ गंर्ग देवी का मंदिर । इस मंदिर में माँ गंगई की अत्यंत [illegible] व स्वयंभू प्रतिमा है । माँ गंगई मनोवांछित फल देने वाली है। इसलिए इस अंचल के गाँव-गाँव और घर-घर में उनका यशगान पू[illegible] और भक्ति के साथ गूंजता है-

"सब भाई मिलकर जय बोलो।
गंगई मैया के।।
सब भाई मिलकर जय बोले।
गंगई मैया के।।
लाल धजा लहराये सुघ्घर।
मंदिर में मैया के।।
चैत-कुंवार फुलवारी बोवाएं।
मंदिर में मैया के।।"

मां गंगई देवी की मूर्ति की प्राचीनता का कोई प्रमाणिक आधार नहीं मिलता। परंतु बुजुर्ग लोग यह बताते हैं- कि इसकी पूजा स्थानीय जमींदार परिवार द्वारा कई पीढ़ियों से की जा रही है। मां गंगई अपनी ममता और करूणा के कारण केवल जमींदार परिवार ही नहीं, बल्कि यहां जन-जन की पूजित अधिष्ठात्री देवी हैं। मां गंगई की प्रतिमा भुंईफोर अर्थात भूमि से स्वयं प्रकट हुई हैं। अर्थात् मां गंगई स्वयंभू हैं।

जनश्रुति के अनुसार 'गंगई' गंगा का लोक रूप है। भाषा विद् डॉ. विनय पाठक ने गंगई शब्द की व्याख्या गंगा + आई = गंगई के रूप में व्याख्यायित किया है। कुछ लोग गंडई गांव का नामकरण गंगई से ही मानते हैं । मां गंगा सहज नारी स्वरूप में रात्रिकाल में अपने गंतवय की ओर जा रही थी। भिनसारे कुकरा बांसने (मुर्गा बोलने) के कारण प्रातः काल की स्थिति में आज जहां उनकी प्रतिमा है, इसी स्थान पर वे भूमि में प्रविष्ट हों गई। तब उन्होंने तत्कालिन जमींदार स्व. लाल मूरत सिंह खुसरों को यथेष्ठ सेवा-सम्मान व पूजा के लिए स्वप्न दिया। बुढ़वा राजा (तब यहां की जनता अपने प्रिय जमींदार को बुढ़वा राजा कहकर ही आदर और प्रतिष्ठा देती थी।) ने स्वप्न को यथार्थ समझकर उक्त स्थान को खुदवाया। तब वहां मां गंगई मूर्ति रूप में प्रकट हुई। तत्काल वहां झोपड़ीनुमा खदर की मड़ैया बनाई गई। कालान्तर में वहां विशाल मंदिर का निर्माण बुढ़वा राजा द्वारा कराया गया। ऐसा बुजुर्ग व वरिष्ठ जनों का कथन है।

मां गंगई की प्रतिमा बड़ी भव्य और अलौलिक है, जिसमें तीन शीश हैं। देवी की ऐसी प्रतिमा अन्य स्थानों में शायद ही हो। कुछ लोगो की ऐसी मान्यता है कि मध्य शीश माँ गंगई का है और अगल-बगल का शीश क्रमशः लोकदेवी महामाया व शीतला का है। माँ गंगई की मूर्ति की व्याख्या चाहें जिस रूप में हो यह सत्य है। माँ गंगई की यह दिव्य प्रतिमा दया, ममता और करूणा की प्रति मूर्ति है। इसी गुण और प्रभाव के

कारण माँ गंगई को इस अंचल में लोक देवी की मान्यता मिली हुई है। जहां भक्त जन आकर अपने मनोवांछित फल को प्राप्त करते हैं। मां गंगई कीशक्ति और महिमा अपार है। स्वर्गीय श्री चतुर राम यादव ग्राम टिकरीपारा जिन्होंने वर्षों माँ गंगई मंदिर में चौकी दार के रूप में सेवा की थी। उन्होने बताया था कि माँ गंगई से जुड़ी हुई अगल-बगल की प्रतिमा उनकी संतानों की है। जिनका एक-एक हाथ मां गंगई के कंधे परे व एक-एक हाथ मां के स्तन पर है। उन्होने बताया था कि मैने माँ गंगई को सैकड़ों बार स्नान कराया है। स्नान कराते समय मैंने यह प्रत्यक्ष अनुभव किया है। वे मॉ के विराट स्वरूप के प्रत्यक्ष दर्शन की बात भी बताते थे। जस गायक और सेऊक श्री रामा देवांगन टिकरी पारा भी मां गंगई की इस महिमा पर अपनी हामी भरते हैं।

मॉ गंगई की महिमा का बखान आज चारों ओर है। यहां चैत नवरात्रि व कुँवार नवरात्रि के समय भूतपूर्व जमींदार लाल डोगेन्द्र शाह खुशरों व मां के सैकड़ों भक्तों की ओर से मनोकामना ज्योति प्रज्जवलित की जाती है। यहां की विसर्जन झांकी भी अलौलिक होती है। नवमी की रात्रि विसर्जन जुलूस में सैकड़ों जंवारा ज्योति की दिव्य आभा से जन-मन अलौलिक हो उठता है। दूर-दूर ग्रामीण अंचलों से आकर मॉ के भक्तगण चाहे स्त्री हो या पुरूष, चाहे बाल हो या वृद्ध, अपनी मनोकामना के पूर्ण होने की मनौती मनाते हैं।

गंगई मंदिर से लेकर सुरही नदी के रपटाघाट तक 1 कि.मी. के रास्ते में हजारों श्रद्धालु जनों के कंठ से निकले मां गंगई के जयघोष से सारा वातावरण हर्षित और आंनदित हो जाता है। जंवारा ज्योति से प्रकाशित जन-जन का मुख मंडल श्रद्धा और भक्ति से भरा रहता है। पुत्र-कामना से आई महिलाएं हंऊला (पीतल के घड़े) में जल लेकर जंवारा ज्योति के सम्मुख श्रद्धा से दण्डवत हो जाती हैं। उसके ऊपर से ज्योति जुलूस सहज भाव से जब तक न निकल जाय, वे दण्डवत उसी अवस्था

में पड़ती रहती हैं। यहाँ माँ गंगई के प्रति ऐसी जन आस्था व जन विश्वास है।

धान की फसल में लगने वाले गंगई रोग के नियंत्रण के लिए गंगई मंदिर के जल का उपयोग भी जन आस्था को प्रमाणित करता है। अपने धान के खेतों में गंगई रोग फैल जाने पर दूर-दूर से किसान आकर यहां बड़े सवेरे से सुरही नदी की जल धारा की विपरीत स्थिति में पात्र रख पानी भरकर लाते हैं और मां गंगई को अर्पित करते हैं। तत्पश्चात पुजारी द्वारा उसे अभिमंत्रित कर दिया जाता है। अभिमंत्रित जल को खेतों में छिड़कने पर गंगई रोग नियंत्रित हो जाता है। यह है माँ गंगई की महिमा और श्रद्धालु जन की आस्था।

वर्तमान में भूतपूर्व जमींदार लाल डोंगेन्द्र खुशरो इस मंदिर के सर्वराकार हैं। खुशरोजी के अवदान को कभी नहीं भुलाया जा सकता। उन्होंने प्रारंभ से लेकर आज तक जनहित के कई कार्य किये हैं। चाहे गंडई का विशाल बाजार स्थल हो, हाईस्कूल या राईसमिल के लिए उपलब्ध भूमि हो। उन्होंने दान में देकर अपनी दानशीलता और जनता के प्रति उदारता का परिचय दिया है। इस भावना के वशीभूत हो उन्होंने मां गंगई को 22 एकड़ की उपजाऊ भूमि दान दी है, पर इस मंदिर का अपेक्षित विकास नहीं हुआ है। मंदिर भले ही निजी संपत्ति है, किन्तु यह जन आस्था का केन्द्र है। अतः इसका संचालन जन आस्था के अनुरूप हो। क्या ऐसी स्थिति में मंदिर की व्यवस्था का संचालन ट्रस्ट द्वारा उपयुक्त न होगा? पूर्व की तरह आदणीय जमींदार साहब लाल डोगेन्द्र शाह खुशरो अपनी उदारता का परिचय देते हुए ट्रस्ट के गठन का मार्ग प्रशस्त करेंगे । जन-जन की यही अभिलाषा है। ❑

आस्था और विश्वास का केन्द्र : नर्मदा

सदियों से भारत अनेक संस्कृतियों का संगम स्थल रहा है। विभिन्न संस्कृतियां यहां आयीं। पुष्पित, पल्लवित हुईं और भारतीय संस्कृति में समाहित हो गईं। जो स्थान इन संस्कृतियों के संगम स्थल रहे, वे धार्मिक व ऐतिहासिक दृष्टि से प्रसिद्ध हुए और अपने साथ आज भी किसी न किसी कहानी को लिए हुए उस युग का गौरवगान कर रहे हैं।

भारत में अनेक स्थान हैं, जो धार्मिकता से ओतप्रोत हैं। चाहे वो नदियां हो, जंगल-पहाड़ हों या कोई तीर्थ स्थान। ये हमारी धार्मिक आस्था और विश्वास के प्रतीक हैं। ऐसा ही एक स्थान है- "नर्मदा"। जिसे स्थानीय भाषा में 'नरबदा' कहकर संबोधित किया जाता है। नर्मदा का आशय अमरकंटक से निकलने वाली पुण्य सलीला नर्मदा से कतई नहीं है। पर इसकी कहानी कहीं न कहीं उससे जुड़ी हुई है।

छत्तीसगढ़ के राजनांदगांव जिले के गण्डई कस्बे से 6 किमी. दूर दक्षिण में स्थित है यह नर्मदा। इस अंचल विशेष का प्रसिद्ध मेला और स्थानीय लोगों की आस्था और श्रद्धा का केन्द्र बिन्दु। नर्मदा की प्रसिद्धि

नर्मदा कुण्ड से है। जहाँ से गर्म जल की अजस्र धारा अनवरत प्रवाहित हो रही है। ऐसी धारा जो कभी छिजने का नाम नहीं लेती। चाहे, कितनी भी गर्मी क्यों न हो? बारहों माह निरंतर वेग से प्रवाहित हो रही है। यहां आकर हजारों लोग पवित्र स्नान करते हैं और अपने को पुण्य का भागी बनाते हैं।

नर्मदा कुण्ड ग्राम खैरा के पास स्थित है। कुण्ड की प्रसिद्धि के कारण एक और बस्ती बस गई है, जिसे नर्मदा कहा जाता है। यहां अधिसंख्य मुसलमान हैं। दोनों बस्ती की आबादी लगभग एक हजार होगी। नर्मदा हमारी धार्मिक आस्थाओं का संगम स्थल ही नहीं, बल्कि आवागमन की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। यहां से राजनांदगांव, डोंगरगढ़, बालाघाट, भोपाल, कवर्धा, जबलपुर और बिलासपुर के लिये सड़क साधन उपलब्ध है।

नर्मदा कुण्ड के किनारे नर्मदा देवी का प्रसिद्ध मंदिर है।शक्ति स्वरूपा और जीवन दायिनी नर्मदा देवी में चैत्र और कुंवार महीने में जंवारा बोया जाता है, जहाँ श्रद्धालु भक्त अपनी मनोकामना पूर्ण करने तेल और घृत की ज्योति जलाते हैं। चूंकि इसी समय डोंगरगढ़ का प्रसिद्ध मेला भी होता है। अतः इस मार्ग से डोंगरगढ़ जाने वाले दर्शनार्थी नर्मदा मइया के दर्शन कर दोहरे पुण्य के भागी बनते हैं। नर्मदा में नर्मदा मइया के अतिरिक्त राम मंदिर, कृष्ण मंदिर, लोधेश्वर (शिव) मंदिर, कबीर, कुटीर व बाबा गुरू घासीदास का जैतखाम दर्शनीय है।

नर्मदा का मंदिर लगभग तीन-चार सौ साल पुराना प्रतीत होता है। किन्तु यहां रखी प्रस्तर प्रतिमाएँ कल्चुरि कालीन 10वीं-11वीं ई. की है। इन मूर्तियों का शिल्प वैभव बड़ा सुन्दर और कलात्मक है। इनमें प्रमुख गणेश, वीरभद्र, देवी नर्मदा, बैकुण्ठधाम आदि प्रमुख हैं। अंलकृत नंदी की प्रतिमा, शिव लिंग व जलहरी भी यहाँ स्थापित है। नर्मदा मंदिर

के शिखर व जंघा भाग में मध्य कालिन कुछ मूर्तियाँ विद्यमान है। इनमें रावण, कच्छपावतार, मतस्यवतार, नर्सिंह अवतार का सुंदर अंकन है। अतः नर्मदा मंदिर का अपना पुरातात्विक महत्व भी है।

नर्मदा का प्रसिद्ध मेला प्रतिवर्ष माघ-पूर्णिमा को तीन दिनों तक भरता है। जहाँ लोग हजारों की संख्या में नर्मदा स्नान व नर्मदा मइया के दर्शन के लिए आते हैं। यह इस अंचल का सबसे बड़ा मेला है। जहां दैनिक जरूरत की चीजों से लेकर वस्त्राभूषण तक बिकने के लिए आते हैं। मनोरंजन के साधन, झूला, सर्कस सब सुलभ होते हैं। मेला, मड़ई तो पारस्परिक स्नेह और प्रेम के आदान-प्रदान के लिए ही जाने जाते हैं। जहां लोग देवी दर्शन व मनोरंजन के साथ-साथ अपने सुख-दुख को सहज रूप में बांट लेते हैं। बैल गाड़ियों में चढ़कर दूर-दूर से लोग सूरज उगने से पहले यहां पहुच जाते हैं। सायकल की ठिन-ठिन और मोटर के पोंप-पोंप से तो आने-जाने वालों के कान भर जाते हैं। ऐसी भीड़ जो एक ही स्थान की ओर चारों दिशाओं से किसी चुम्बकीय शक्ति के जरिये खींची जा रही हो। मेला की सुव्यवस्था स्थानीय ग्राम पंचायत व मंदिर ट्रस्ट समिति द्वारा की जाती है। नर्मदा मेला के साथ-साथ नर्मदा मइया व नर्मदा कुण्ड के यहाँ अवतरण की कथा कम रोचक नहीं हैं। इस नर्मदा कुण्ड के लिए दो राजाओं के बीच जो युद्ध हुआ वह तो और भी रोमांचित कर देने वाला अविश्वसनीय, किन्तु सत्य है। जो आज भी यहाँ जनमानस में व्याप्त है।

कहा जाता है कि खैरागढ़ रियासत में माँ नर्मदा के परम भक्त एक साधु थे। वे अक्सर नर्मदा स्नान के लिए पैदल मंडला जाया करते थे। पर्व विशेष में तो उनकी उपस्थिति मंडला में अनिवार्य होती थी। साधु की इस भक्ति से नर्मदा बड़ी प्रभावित हुई। नर्मदा मइया ने साधु की भक्ति से प्रसन्न होकर कहा - "बेटा तुमने मेरी बड़ी भक्ति की है।

मैं तुम से प्रसन्न हूं। तुम इतनी दूर चलकर आते हो, तुम्हारी पीड़ी मुझसे देखी नही जाती। इसलिए मैं स्वतः तुम्हारे नगर में आकर प्रकट होऊंगी।" साधु नर्मदा मइया की इस महती कृपा से गदगद हो गये और अपने स्थान पर आकर नर्मदा माँ के प्रकट होने की प्रतीक्षा करने लगे।

इधर नर्मदा मइया एक साधारण स्त्री का रूप धारण कर खैरागढ़ के लिए प्रस्थान हुई। दिनभर चलती, रात को विश्राम करती। फिर भिनसारे अपने गन्तव्य को चल पड़तीं। पहेट के समय एक राऊत (यादव) अपनी गायों को "पछेला" ढीलकर वहाँ चरा रहा था। जहाँ वर्तमान में नर्मदा कुण्ड है। छत्तीसगढ़ में राऊत मुंदरहा (भिनसारे) अपनी गायें ढीलकर चराता है। इस चरवाही को पछेला कहा जाता हैं। इसी समय नर्मदा मइया यहां से गुजर रही थी। संयोगवश राऊत की एक गाय खेत में चरने लगी । उस गाय का नाम भी नर्मदा था । राऊत ने कहा- "ये..... नर्मदा कहाँ जाबे?" अपना नाम सुनकर नर्मदा मइया ठिठक गई। उसने राऊत से पूछा-भईया यह कौन सा गाँव है ? राऊत ने कहा- खैरा । खैरा नाम सुनकर नर्मदा मइया ने सोचा, शायद यही तो उसका गन्तव्य है। खैरा सुनकर नर्मदा मइया उसी स्थान पर अजस्र जलधारा के रूप में धरती से फूट पड़ी। खैरा और खैरागढ़ में गढ़ को छोड़ दें तो प्रथमतः खैरा ही है। कहा जाता है कि खैरागढ़ का नामकरण भी खैरा वृक्षों की अधिकता के कारण ही हुआ है। तब से नर्मदा मइया यहाँ मूर्ति के रूप में स्थापित हैं और गर्म जल धारा के रूप में प्रवाहित। चूंकि नर्मदा की जलधारा का प्रवाह-स्थान गण्डई जमींदारी में है। अतः तत्कालीन गण्डई जमींदार ने उक्त स्थान पर भव्य मंदिर व कुण्ड का निर्माण कराया। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि वर्तमान नर्मदा कुण्ड से दस कदम दक्षिण में एक नाला है, जो तत्कालीन छुईखदान रियासत की सीमा रेखा है। नर्मदा मइया खैरागढ़ तो नहीं जा पायीं, फिर भी मां की इस

कृपा से साधु व खैरागढ़ नरेश अति आनंदित हुए। नर्मदा कुण्ड से खैरागढ़ की दूरी 26 किमी. है। सभी रियासत व जमींदारी के लोग यहां आकर कुण्ड में स्नान कर व नर्मदा मइया के दर्शन से कृतार्थ होते हैं।

कुछ समय बाद एक और घटना घटी। जिसमें भक्ति की शक्ति का मूल स्रोत छिपा हुआ है। सूर्योदय से पहले प्रथम नर्मदा स्नान को लेकर खैरागढ़ की रानी और गण्डई की रानी लक्ष्मी बाई के मध्य विवाद हो गया। इस वाद-विवाद से खैरागढ़ की रानी इतनी कुपित हुई कि उन्होंने खैरागढ़ जाकर अपने राजा को गण्डई जमींदारी से युद्ध के लिए उकसाया और कहा कि - ''जब तक आप गण्डई जमींदार को परास्त कर लक्ष्मी बाई को मेरी दासी नहीं बनायेंगे तब तक मैं अन्न जल ग्रहण नहीं करूंगी । तब खैरागढ़ एक विशाल रियासत और गण्डई जमींदारी थी।

खैरागढ़ नरेश ने गण्डई जमींदारी पर आक्रमण की योजना बनाई। खैरागढ़ नरेश के पास भरपूर सैन्य शक्ति थी। तलवार, बन्दूक, भाले सब कुछ। पर गण्डई जमींदारी के पास सैन्य शक्ति नहीं थी। ऐसी स्थिति में गण्डई जमींदार का परास्त होना स्वभाविक था। जब लक्ष्मीबाई को इस आक्रमण की जानकारी हुई। तब भी वह विचलित नहीं हुई। लक्ष्मीबाई धार्मिक स्वभाव की थी। भँवरदाह (भ्रामरी देवी) इनकी इष्टदेवी है। भँवरदाह वह स्थान है जहाँ मधुमक्खियों के सैकड़ों छत्ते हैं। यह स्थान गण्डई से 8 किमी. पूर्व घने जंगल में है। आज भी उनके वर्तमान वंशजों द्वारा भँवरदाह की पूजा-अर्चना की जाती है। रानी लक्ष्मीबाई अपनी इष्टदेवी भ्रामरी देवी की पूजा-प्रार्थना में तल्लीन हो गई। तब तक खैरागढ़ की विराट सेना नर्मदा कुण्ड के करीब पहुंच चुकी थी। रानी लक्ष्मीबाई ने भ्रामरी देवी से सैन्यशक्ति के अभाव में अपने कुल की आन, बान और शान की रक्षा की याचना की। इस प्रार्थना से भँवरदाह के छत्तों से

हजारों की संख्या में मधुमक्खियां उड़कर खैरागढ़ के सैनिकों पर टूट पड़ीं। मधुमक्खियां सैनिकों को काटने लगी। सैनिक व्याकुल होकर तलवार, बन्दूक, भाले छोड़कर भागने लगें। मधुमक्खियाँ सैनिकों को दूर खदेड़ कर ही वापस आयीं। इस दैवीय कृपा से गण्डई जमींदारी की रक्षा हुई। तत्कालीन गण्डई जमींदार ने खैरागढ़ के सैनिकों द्वारा छोड़े गये उन बन्दूक भालों को लाकर अपने आँगन में दफन कर दिया और उस पर चबूतरे का निर्माण कराया। यह है कि भक्ति की शक्ति। आस्था और विश्वास की जीत।

नर्मदा का यह पवित्र कुण्ड भक्ति और शक्ति की इस कथा को अपनी निर्मल जलधारा के रूप में आज भी कह रहा है। अब न कहीं द्वेष है, न कहीं कोई ईर्ष्या। सभी लोग आते हैं, स्नान करते हैं और नर्मदा मइया के दर्शन कर कृत-कृत होते हैं। प्रेम और भाईचारे का प्रतीक यह नर्मदा सबकी आस्था का केन्द्र है । ग्राम नर्मदा में अधिसंख्य मुसलमान परिवार हैं। जो यहाँ हर तरह का सहयोग करते हैं। यहाँ आपसी समन्वय और सौहार्द्र की सुन्दर मिशाल। माँ नर्मदा की कृपा सब पर है। सबकी यह माता हैं, और सब इसकी संतान। नर्मदा कुण्ड से निकली जल धारा एक छोटी नदी के रूप में आगे चलकर सुरही नदी में समाहित हो गई है। सुरही नदी जिस पर पैलीमेटा में बांध बना है। यह बांध गण्डई अंचलवासियों का जीवनदाता है। पैलीमेटा बाँध से ही इस अंचल में सिंचाई होती है। आस्था और विश्वास का केन्द्र नर्मदा सबकी मनोकामना पूर्ण करे। ❑

पुरातात्विक महत्व के अन्य स्थान

किसी स्थान की पुरासम्पदाएँ उस स्थान के अतीत का जीवंत साक्षी होती हैं । उसका वर्तमान चाहे जैसा भी हो, लेकिन पुरासम्दाओं के आधार पर उसके समृद्ध इतिहास के पन्नों को पल्टा जा सकता है। पन्नों को पलटने से उसका गौरवशाली अतीत वर्तमान की देहरी पर आकर अपनी झलक दिखा जाता है। ऐसे महत्वपूर्ण स्थानों की गंडई अंचल में कमी नहीं है। गंडई और गंडई के आसपास अनेक ऐसे गांव हैं, जहां पुरातात्विक महत्व के पाषाण शिल्प आज भी मौजूद हैं। ये पाषाण शिल्प कहीं पर पूरी तरह सुरक्षित हैं, तो कहीं खंडित अवस्था में। आइए उन स्थानों के बारे में जाने ।

(1) बागुर- गंडई से पांच किलोमीटर दूर पूर्व में स्थित है बागुर। वर्तमान में बागुर एक समृद्ध गांव है। यहां ज्यादातर किसानों की आबादी है। यहाँ कई स्थानों पर पुरातात्विक महत्व के पाषाण शिल्प बिखरे पड़े हैं। इनमें सर्वाधिक महत्व का एक विशाल शिवलिंग है, जो शाला भवन निर्माण के समय नींव की खुदाई में मिला है। इसी स्थान पर सोमवंशी कालीन बड़े आकार की ईंटे भी मौजूद हैं। इससे यह आभास होता है कि यहां विशाल शिव मंदिर रहा होगा। इस स्थान के पूर्व में इमली पेड़ के नीचे प्रस्तर की कई खंडित मूर्तियाँ पड़ी हुई हैं। ईंटे भी है। प्राचीन मंदिर की दीवारें स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती हैं। यहीं मंदिर की द्वारशाखा की पुष्प वल्लरि से युक्त शिलाएं भी मौजूद हैं। जो यहाँ प्राचीन काल में मंदिर होने की संभावना को बल देती हैं। शा.प्रा. बागुर के नवनिर्मित भवन के

पास दो योद्धओं की प्रस्तर प्रतिमाएँ हैं। स्थानीय ठाकुरदइया में चामुण्डा देवी की प्रस्तर पर उत्कीर्ण खंडित प्रतिमा खुले आसमान के नीचे पड़ी हुई है। बागुर गाँव से सुरही नदी के उस पार बीरनपुर खार में एक टीला है। यहाँ पर भी पुरातत्व से संबंधित मूर्तियाँ हैं, जिनमें काले पत्थर पर उत्कीर्ण गणेश जी प्रतिमा प्रमुख है। यहाँ आसपास खुदाई होने से यहाँ का पुरातात्विक महत्व स्पष्ट होगा।

(2) गंडई - टिकरीपारा गंडई में उपलब्ध प्राचीन शिवमंदिर के अतिरिक्त इसके आसपास मुहल्लों व खेत खारों में महत्वपूर्ण प्राचीन मूर्तियां बिखरी पड़ी हैं। मलहा पारा गंडई में विशाल इमली वृक्ष के नीचे गणेश जी व बुद्ध की सुंदर प्रतिमा रखी हुई है। देख भाल के अभाव में वर्षा व धूप के कारण ये मूर्तियाँ अपनी आभा खो रही है । इसी प्रकार गण्डई में ही कृषि उपज मंडी के पीछे नाग बाहरा खार में नीम वृक्ष के नीचे शेषनाग की बड़ी आकर्षण पाषाण प्रतिमा विराजमान है। जिस पर लोगों ने आस्थावश बंदन का लेप चढ़ा दिया है। शेषनाग की ऐसी अदभुत प्रतिमा अन्यत्र दिखलाई नहीं पड़ती।

(3) पंडरिया- गंडई और पंडरिया अलग-अलग बस्तियाँ है। राजस्व की दृष्टि से पहले इनका अलग ही अस्तित्व था, आज भी है । चूंकि दोनों बस्तियाँ टिकरीपारा के प्राचीन शिवमंदिर व घटियारी के प्राचीन शिवमंदिर के मध्य स्थित है। पंडरिया के बहेरा भाठा, डिहवार चौक, तालाब के किनारे बरगद के नीचे, गांधी चौक व सोनार पारा में कुआँ के किनारे प्राचीन शिल्प खंडों के साथ ही गणेश, विष्णु व महिषासुर मर्दनी आदि की प्रतिमाओं के अवशेष आज भी विद्यमान हैं। लोग इनकी

पूजा-अर्चना करते हैं। गांधी चौंक में शीतला मंदिर में एक सुंदर प्रतिमा है, जिसे लोग शीतल माता के रूप में पूजते हैं। वस्त्र से आवृत्त होने के कारण प्रतिमा की पहचान नहीं हो पाई है। राजा बाड़ा से लगे राम मंदिर में काले पत्थर पर उत्कीर्ण चतुर्भुजी गणेश की आकर्षक प्रतिमा जो पूरी तरह सुरक्षित है, रखी हुई है। इसी प्रकार कोपे भाठा में भी हाई स्कूल के पास मंदिर में प्राचीन मूर्तियों के अवशेष विद्यमान हैं। निश्चित रूप से ये सभी मूर्तियाँ घटियारी मंदिर से ही संबंधित हैं।

(4) कटंगी - कटंगी घटियारी से लगी हुई बड़ी बस्ती है। यहां तालाब के किनारे चतुर्भुजी विष्णु की विशाल प्रतिमा के अतिरिक्त गांव के मध्य शीतला मंदिर में काले पत्थर पर उत्कीर्ण राजपुरूष की प्रतिमा है। जिसके दोनों जंघों पर करबद्ध नारी प्रतिमा उत्खचित है। जो राजपुरूष की रानियां होंगी। इसके नीचे भाग में सेविका अंकित है। इस प्रतिमा को देखने से यह अभास होता है कि इसी राजपुरूष ने घटियारी मंदिर या कटंगी चतुर्भुजी विष्णु मंदिर का निर्माण करवाया होगा? यहां के मंदिरों के निर्माण काल व निर्माणकर्ता पर यह प्रतिमा अवश्य ही प्रकाश डालेगी। जरूरत यहां की प्रतिमाओं पर शोध व अन्वेषण की है।

(5) कृतबांस - ग्राम कृतबांस में घटियारी जाने के मार्ग पर पीपल पेड़ के नीचे अनेक मूर्तियां खंडित रूप में बिखरी पड़ी हैं। कृतबांस के शीतला मंदिर में महिषासुर मर्दनी की एक विशाल व भव्य प्रतिमा है। जिस पर बंदन की परत चढ़ी हुई है। कृतबांस के आसपास और मूर्तियों के होने की संभावना बनती है, क्योंकि कृतबांस में ही एक अलंकृत जैन तीर्थंकर की आकर्षक प्रतिमा प्राप्त हुई थी, जो इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़ के पुरातत्व संग्रहालय में संग्रहित है।

(6) नरोधी - गण्डई से 7 कि.मी. दूर नरोधी गांव है। नरोधी राजनांदगांव व कवर्धा जिले की सीमा है। यहां एक छोटी नदी बहती है। जिसमें प्राकृतिक जलस्रोत अविरल रूप से प्रवाहित हो रही है। इसे ''नर्मदा'' कहकर लोग पूजा -अर्चना करते हैं तथा इसमें पुण्य स्नान करते हैं। इसी स्थान पर नदी के किनारे नंदी व गणेश की खंडित प्राचीन प्रतिमा विद्यमान है। प्राथमिक शाला भवन के पीछे नीम के नीचे लक्ष्मी, गणेश, सरस्वती की प्रस्तर प्रतिमा है। यह स्थान टीलानुमा है। यहाँ सोमवंशी कालीन ईंटे भी मिलती हैं। इस टीले की खुदाई से पुरातात्विक महत्व की पुरा सम्पदाएँ यहाँ मिलने की संभावना है।

उपरोक्त स्थानों के अतिरिक्त गण्डई अंचल के आसपास ग्राम टिकरीपारा, अखराघाट, खोंघा, लालपुर, खोलवा, सिंघनगढ़ आदि स्थानों में भी प्राचीन पाषाण कलाकृतियां, खंडित मूर्तियां व स्मारक आदि मौजूद हैं। इन पुरा सम्पदाओं के संरक्षण के साथ ही इनके महत्व से लोगों को अवगत कराने व उनसें चेतना जागृत करने की आवश्यकता है। ताकि अंचल के लोग इन पुरा सम्पदाओं का मूल्यांकन कर अपने गौरवशाली अतीत से परिचित हो सकें। संचार माध्यमों से इनका प्रचार-प्रसार भी जरूरी है। ताकि पुरातत्ववेत्ता इस ओर आकर्षित होकर इन पुरा सम्पदाओं पर शोध व गहन अध्ययन कर इनके महत्व को प्रतिपादित कर सकें। ये सारे उपक्रम इस अंचल की कला और संस्कृति को प्राणवान बनायेंगे। ❑

मंडीप खोल के भीतर की मनोहारी प्राकृतिक संरचना

Dr. Raman Singh
Chief Minister
C.G. Govt.

Chhattisgarh
Full of surprises

Tourist places of Chhattisgarh

Brijmohan Agrawal
Minister of Tourism
C.G. Govt.

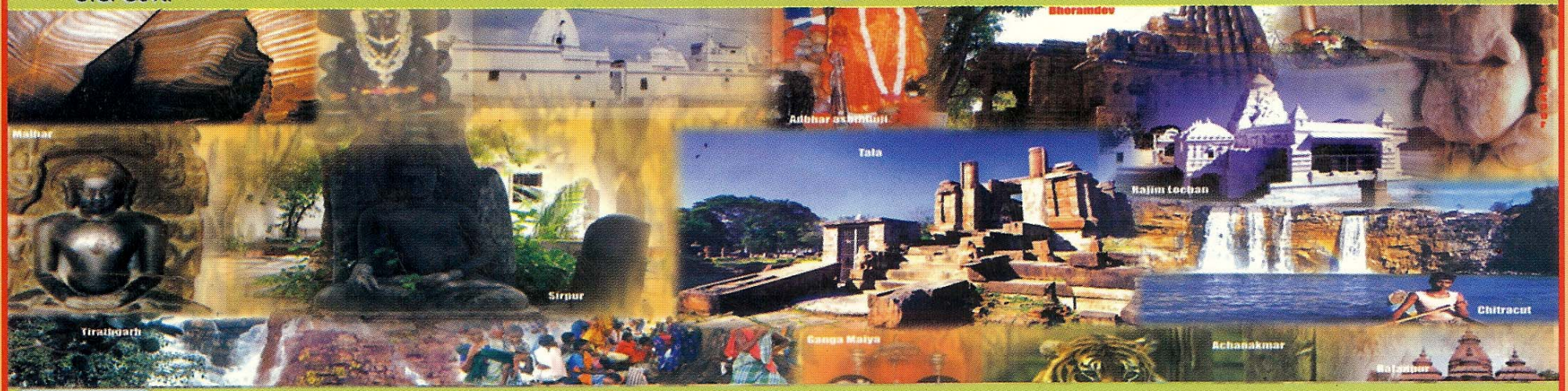

Santosh Bafna
Chairman
C.G. Tourism board

Chhattisgarh Tourism Board
Paryatan Bhavan
Sibbal Palace,G.E. Road, Raipur-492006 Chhattisgarh - INDIA Tel.: 91-771-4066415 Fax:+91-771-4066425
E-mail : contactus@chhattisgarhtourism.net Website : www.chhattisgarhtourism.net